

पात्र-परिचय

पुरुष

- १ सूत्रधार*** नाटकक निर्देशक ।
- २ राजा (भीष्मक)*** कुण्डिनपुरक राजा, भक्त, स्वामीक पिता ।
- ३ स्वामी*** सुवराज, भीष्मकक पुत्र, श्रीकृष्णक विद्वेधी ।
- ४ स्वमरथ*** भीष्मकक पुत्र, स्वामीक अनुगामी ।
- ५ कञ्चुकी (नयसागर)*** अन्तःपुरक रक्षक वृद्ध राजपुरुष ।
- ६ दीवारिक (कुण्डिनपुरक)*** भीष्मकक द्वारपाल ।
- ७ कलहवर्धन*** घटक, श्रीकृष्णक विद्वेधी ।
- ८ हरिवल्लभ*** घटक, कृष्णभक्त ।
- ९ द्विज*** निमन्त्रणपत्र-वाहक ब्राह्मण, दूत ।
- १० श्रीकृष्ण*** वासुदेव, भगवान्, नायक ।
- ११ बलदेव*** कृष्णक अग्रज, हलधर ।
- १२ उग्रसेन*** मथुराक राजा, कृष्णभक्त, कृष्णक मातामहभ्राता ।
- १३ नारद*** देवर्षि ।
- १४ दीवारिक*** श्रीकृष्णक द्वारपाल ।
- १५ दाहक*** श्रीकृष्णक सारथी ।
- १६ वैनतेय (गरुड)*** वाहन, पक्षिराज ।
- १७ किङ्करी*** श्रीकृष्णक नोकर ।
- १८ क्रथ*** विदर्भक राजा, कृष्णक परमभक्त ।
- १९ कैशिक*** विदर्भक राजा, कृष्णक परमभक्त ।

- २० पुष्ट... कथ-कैशिकक सेवक ।
 २१ चित्राङ्गद... देवदूत ।
 २२ प्रतीहार... कथ ओ कैशिकक द्वारपाल ।

स्त्री

- १ नटी... सूत्रधारक पत्नी ।
 २ देवी... रुक्मिणीक माय, कृष्णक भक्ता ।
 ३ रुक्मिणी... राजकुमारी, भीष्मकक पुत्री, नायिका ।
 ४ सुदक्षिणा... रुक्मिणीक सखी ।
 ५ सुशोभना... रुक्मिणीक सखी ।



श्रीः

रमापतिकृतम्

अथ रुक्मिणी-परिणय^१-नाटकम्

रङ्गारम्भे कपालं शशधरमुरगं भूषणीकृत्य सद्यः
 सन्दीप्याग्निं सुनेत्रे, रुचिर-ज्वनिकाऽर्थं प्रदिश्येभ^२-कृत्तिम् ।
 नन्दादीनात्मवर्मान् नटन-गतिकलागीसपाठेषु दक्षान्
 सन्दिश्याऽऽनन्दपूर्णः शमयतु दुरितं सूत्रधारः शिवो वः ॥१॥

अपि च—

पादाघातप्रकर्षाद् अजति वसुमती, नागलोकं कनीन्द्रः^३,
 कूर्मो नाऽलं विधत्तुं प्रभवति^४, गिरयो भगवशृङ्गाः प्रकम्पात् ।

रुक्मिणी-परिणय-नाटक

नृत्यक आरम्भ में खप्पर (सजवस्त्रक लेख कटोरी) ओ साप के तुरत गहना बनाय (प्रकाशक हेतु) आँख में आगि पृज्ज्वलित कप, सुन्दर ज्वनिका (पर्दा) क हेतु चर्मा उपस्थित कथ ओ नाच-गान में पट्ट नन्दी भृङ्गी इत्यादि अपनालोकसभके आदेश दय नाटकक सूत्रधारस्वरूप आनन्दमय शिव अहाँलोकनिक विपत्तिके शान्त करव ॥१॥

आश्रोरो—

(महादेवक नाचक काल हुनक) पाएक आघातक अधिकता ही पृथ्वी खोलए लगैत अछि, सेपनाग पाताल जाय लगैत अछि, (पृथ्वीधर नागक धारण कयनिहार) काछ पृथ्वी के धारण करवा में समर्थ नहि होइत छथि, भूकम्प ही पहाड़क चोटीसभ खसए लगैत अछि—एहि तरहें तीनूलोकक नाश

१ - हरण—'क' । २ - प्रविशतीयं - 'ख' । ३ - कनीन्द्रो - 'क' ख । ४ - सपवि च / प्रभवति - 'क' ।

इत्थं दृष्ट्वा त्रिलोकी-विलसमभ्य सुरैस्संस्तुतः सोऽभियेकात्
वीथूपस्थाऽभिरक्षन् भुवनमवतु वो धूर्जटिः सुपुसन्तः ॥२॥

नाम्दीपव्यानुसारेण गीतमपि नाट्यगणे :-

[गीतसंख्या - १]

नटराज हरा, नटराज हरा ।
डमरु - पिनाक - विधूल-धरा ॥१॥
विमल कपाल मुकुट सिर रजित
तिलक मनोहर रजनिकरा ।
कुण्डलि कुण्डले मण्डित श्रुतिद्युग
नयन अनल, फनिहार गरा ॥२॥
देख जमनिका विपुल गजाजिन
नन्दी नन्दी-पाठ करा ।
रङ्ग मृदङ्ग बजायधि भीरव
पाँचे बदनै शिव सूत्रधरा ॥३॥

(पूज्य) होइत देखि देवतालोकनि हुनक (महादेवक) स्तुति कयलनि । ताहि
सो पुतन्त महादेव अमृतक वर्षा सो संसारक रक्षा करैत अहाँलोकनिक रक्षा
करयु ॥२॥

नाम्दी-पद्यक अनुसारें गीतो नाट्यगणे :- [गीतसं०-१]

१-नटराज हरा = नाट्यक वेत्ता ओ प्रदर्शक में सर्वपूधान हर (महादेव) ।
पिनाक = शिवक घनुष । कपाल = मनुष्यक खप्परक । रजित = शोभित ।
रजनिकरा = चन्द्रमा । कुण्डलि = सापक कुण्डल सो दुनु कान शोभित । नयन
अनल = आँखि में अग्नि । फनिहार = सापक मथा ॥

२-जमनिका = यवनिका = परदा । विपुल गजाजिन = विस्तृत हाथीक
चर्म । नन्दी = महादेवक पूधान सेवक । नन्दी-पाठ = नाटकक आरम्भिक
मंगल पद्य नाम्दी । रङ्ग = मञ्च पर । पाँचे बदनै = पञ्चमुख भय महादेव
इत्थं नाटकक सञ्चालक सूत्रधार बनल छथि ॥

ताल धरधि वेताल^१, विदूषक
मारद, योगिनि गानपरा ।
खण्डपरशु ताण्डव देखि हरपित
चण्ड हास कर पुमथ बरा ॥३॥
पदभरें व्याकुल शेष कमठ दुहु
जतनहुँ धरय न पाव परा ।
अतिकम्पित भय चललि रसातल
लगमग कर गिरि, टूट सिखरा ॥४॥
कर देखै कङ्कन फनि उगिलल
परसल गरल सगर नगरा ।
अकमित^२ प्रलय तरासे^३ चकित सबे
सुर मुनि वनुज मनुज निकरा ॥५॥
पुमइतें ससधरे वमल सुधारस
ते बाँधल जग चर-अचरा ।
बाधछाले जिवि वृषभ पड़ाओल
ते पुनु विकल भेल इसरा ॥६॥

३-वेताल = शिवक एक गण । विदूषक = नाटकक एक हास्योत्पादक पात्र
नारद वनैत छथि । योगिनी = दुर्गाक सहचरी अष्टयोगिनी । खण्डपरशु =
महादेवक ताण्डव = नृत्य । चण्ड = प्रचण्ड । पुमथ = महादेवक एक गण ॥

४-पदभरें = पाएरक भार सो । शेष = शेषनाग । कमठ = काछु (पृथ्वीके)
शेषनाग ओ शेषनागके काछु धारण कयने छथि । गिरि = पहाड़ ।

५-कर देखै = हाथ में कगनाक रूप में पहिरितहि । फनि = सर्प ।
गरल = धिप । अकमित = अकरिमक । तरासे चकित = डर सो
विस्मित । सुर मुनि = देवता मुनि दैत्य ओ मनुष्यक समूह ।

६-ससधर = चन्द्रमा । वमल = उगिललनि । सुधारस = अमृत । बाध-
छाले = बाधक छाल अमृत पड़ा सो जीविकय । वृषभ = बसहा के ।
पड़ाओल = बैलओलक । इसरा = ईश्वर महादेव ।

१-वेताल = कछु । २-अकम्पित = छ ।

हुतवह पवन कुवेर पुरन्दर
वरुण विरञ्चि विविध अमरा ।
अवहु नाट परिछेद करिअ भव !
पुनु पुनु मांगय जोरि करा ॥७॥
प्रणत रमापति तुअ पद किङ्कुर
शङ्कर सुनिअ बिनति हमरा ।
गिरिजा सहित सकल अघ दुरि कय
परसन भय दिअ अभय वरा ॥८॥

अपि च—

(गीत संख्या -- २)

जय जय त्रिभुवन - तारिणि देवि । सभे अभिमत पुर तुअ पद सेवि ॥
जूटक बाँधि जटा घट एक । तीनि नयन लोहित अतिरेक ॥
सिर सभे अनुपम पञ्च-कपाल । ससधर तिलक विराजित भाल ॥
बिकट दसन अति रसन अधीर । फणिमय भूषण खरब सरीर ॥
खरग काति घट दहिना हाथ । वामा इन्दीवर नर - माथ ॥
नव यौवन उर पर मुण्डमाल । लम्बोदरि परिहृत बघछाल ॥

७ — हुतवह = अग्नि । पवन = वायु । पुरन्दर = इन्द्र । विरञ्चि = ब्रह्मा ।
अमरा = देवगण । नाट परिछेद = नाट्यक समाप्ति । भव = महादेव ।
८ — प्रणत = नतमस्तक । किङ्कुर = शवक । अघ = पाप । परसन = प्रसन्न ।

आओरो — गीत संख्या - २

त्रिभुवन-तारिणि = त्रीनू लोकक बद्धार कयनिहारि । अभिमत पुर =
अभिलषित पुरैत छेक । जूटक = जुट्टी, समेटल केस । लोहित = लाल ।
अतिरेक = अतिशय । पञ्च कपाल = माथ पर पाँच गोठ खप्पर (कपाल-
माला) । ससधर तिलक = चन्द्रमालापी तिलक । विराजित = शोभित ।
भाल = कपाल पर । दसन = दाँत । रसन = जीह । अधीर = थकचल ।
फणिमय = सापक । खरग काति = तख्तारि ओ काता । इन्दीवर नरमाथ =
नीलकमल ओ नरमुण्ड । उर = छाती । लम्बोदरि = नमडल पेटवाली ।

अहु दिश सतत फेर कर सोय । चित्तिचय बास हास^१ अति घोर ॥
प्रणत रमापति कह जग जोहि । शबवाहिनि दाहिनि रहु मोहि ॥

अपि च—

(गीत संख्या -- ३)

प्रणमजो भगवति पद अरविन्द ।
मानम हमर करिअ सानन्द ॥
जइअओ सतत तुअ भगति = विहीन ।
सइअओ न उचित रहिअ हमे दीन ॥
जजो कर तनय सहस अपराध ।
न कर जननि परिपालन = बाध ॥
यदि तेजिअ मोहि परसुत जानि ।
जगजननी पद होएत^२ हानि ॥
अञ्जलि बाँधि निवेदिअ तोहि ।
हर - मेहिनि ! परसनि रहु मोहि ॥
तुअ पद प्रणत रमापति भान ।
पातक^३ हरिअ करिअ वरदान ॥

(नान्द्यन्ते सूत्रधारः)

सूत्रधारः—अलमतिविस्तरेण । भो भोश्चाराग्रसराः ! आदिष्टोस्मि निखि-

फेर = गिदड़ । चित्तिचय = चित्ताक समुदाय मे, मनशान मे । शबवाहिनि =
मृतकक बाहन-वाली । दाहिनि = अनुकूल ।

आओरो — गीत संख्या - ३

पद अरविन्द = चरण कमल । तुअ भगति विहीन = अहाँक भक्ति में
रहित । तनय = पुत्र । सहस = हजार । परिपालन बाध = पालब नहि छोड़ैछ ।
परसुत = भानक पुत्र । हर मेहिनि = शिवक गृहिणी । पातक = पाप ।

(नान्दीक अन्तमे सूत्रधार प्रवेश करैत छबि)

सूत्रधार—अधिक विस्तारक प्रयोजन नहि । हे हे अग्रगामीलोकनि ! आदेश

१ — हास — 'ख' । २ — तएह — 'ख' । ३ — पात्र हेरिअ — 'क' ।

लभुपालसङ्घी - निर्मलकिरीटनिवह-सम्माजित-पद्मद्वारविन्द-
परागेण प्रोद्दण्ड-दीर्घदण्डसंलग्न-प्रचण्डमण्डलायखण्ड-खण्डीकृत-
शेषहिप-मण्डलेन समुच्छिताऽति-वितत-यवन-बलारण्य-विलुप्त-
मैथिलपद्मी - प्रवर्त्तिक-प्रताप - दधदहन-ज्वालावली-समुद्भूत-
दिग्बलयेन तानादेशोपगत - सकलाधिबन्दाभिलाष-परिपूरणक-
सुरद्र-मावतारेण महाराज - श्री श्री श्रीमान् नरेन्द्रसिंह-देवदेवेन,
यथा भगवत्वाः श्रीकमलेश्वरीः स्नानयात्रा प्रसङ्गे पुं सम्प्राप्तान्
अतिदूरवर्त्तिनोऽपि महाजनान् विविधविद्या-विलासिनी-कम-
नीयकण्ठाभरण - सद्गान् अस्मत्सदोवस्थितोऽत्र विद्वज्जनान्
अभिनन्दयितुं कस्यापि नूतनरूपकरवाभिनयमाचरन्त्येति ।
तच्च विना प्रेयस्या स्मृतुं न शक्नोमि किं पुनरभिनयेतुम् ।
अतस्तामेवाऽऽहूय अनुचिन्तयामि तदिति । (परिक्रम्य नेपथ्या-

पक्षोने छी—सकल राजवर्गक स्वच्छ मुकुट-समूहक द्वारा पोछल गेल
छनि दून् चरणकमलक पराग जलिकर, प्रचण्ड बाँहि रूपी दण्ड मे
लानल प्रचण्ड मण्डलाप्र (आगुभाग मे गोलाकार लिबल) सहज्जारि
सँ काटल गेल समस्त शत्रुवर्ग जनिका सँ, समृद्धिशाही अतिविस्तृत
मुसलमानी सेनाछपी वन मे लुप्त भेल मैथिलपद्मी केँ फेरसँ चला-
वयवाला प्रतापरूपी दावागिन (वनक आगि) क ज्वालाक समूह सँ
अत्यन्त प्रकाशित छन्हि दिशाक ओर-छोर जनिका द्वारा, अनेक देश
सँ आयल सकल याचक-समूहक अभिलाषा केँ पूर्णकरबा मे कल्पवृक्ष
स्वरूप, महाराज श्री श्री श्रीमान् नरेन्द्र सिंह देवदेवक द्वारा—जे
भगवती श्रीकमलेश्वरीक (कमला नदीक) स्नानप्रयुक्त मेलाक अवसर
पर अत्यन्त दूरहु सँ आयल महान् व्यक्ति-सभक, अनेक विद्यारूपी
विलासवतीक सुन्दर कण्ठक गहना सद्गान तथा हमर सभा मे रहनि-
हारो विद्वानलोकनिक अभिनयन करवाक लेल कोनो नवीन नाटकक
अभिनय करह' । आ से विना प्रियाक सोचियो ने सकैत छी आ

भिमुखमवलोक्य सबहुमानम्) प्रिये ! इतस्तावदायानु
भवती ।

नटी—(प्रविश्य) वन्दामि पदमं अज्जउत्तं, अद्य आपणवेषु मं अणुमाहं कदुअ
अज्जउत्तो, केण उण कज्ज-विसेसेण सुमरिदहि अज्जउत्तो ? [वन्दे
पद्मम् आर्यपुत्रम् । अद्य आज्ञापयतु माम् अनुग्रहं कृत्वाऽऽर्यपुत्रः, केन
पुनः कार्यविशेषेण स्मृतास्मि आर्यपुत्रेण ?]

सूत्रधारा—प्रिये ! जानात्येष भवती,

अस्ति श्रीराघवेन्द्रक्षितिरमणसूतो मैथिलानामधीशो
दाने कल्पद्रुमाभः प्रसन्न-रिपुबलध्वान्तविध्वंसनार्कः ।
कीर्त्या निजित्य चन्द्रं धवलितभूवतो भर्गपादारविन्द-
द्वन्द्वव्यासक्तचेता नृपकुलतिलकः श्रीनरेन्द्रादि-सिंहः ॥३॥

तेन च तत्पररूपकाभिनयाय नियुक्तोऽस्मि, तदनुस्मरणायाऽऽचरणाय च ।

अभिनय कतय सँ कय सकय । अतः हुनके वजाय तकर परामर्श
करैत छी । (टहलि नेपथ्य दिस देखि अतिआदरपूर्णक) प्रिये !
कनेक एम्हुर आछ अहाँ ।

नटी—(प्रवेश कय) पहिने आर्यपुत्रकेँ प्रणाम करैत छी । तखन कृपा कय
आर्यपुत्र हमरा आशा देख् ओ कोन विशेष काजक हेतु आर्यपुत्र स्मरण
कयलनि अछि ?

सूत्र०—प्रिये ! अहाँ जनितहि छी,

राजा राघव सिंहक पुत्र, मैथिलसभक अधिपति (राजा), दान
करबा मे कल्पवृक्षक समान, विस्तृत शत्रुक बलरूपी अवधकारक नाश
करबा मे सूर्यस्वरूप, यद्य सँ चन्द्रमाकेँ जीति संसारकेँ उज्जर वन-
ओनिहार, धिक्क चरणकमल-द्वयमे विसकेँ लगओनिहार तथा राजा-
लोकनि मे श्रेष्ठ श्रीनरेन्द्र सिंह छथि ॥३॥

हुनका द्वारा नवीन नाटकक अभिनय करवा मे नियुक्त छी । तकर
पुनः स्मरणकरयबाक लेल ओ तदनुसार तैयार होयबाक लेल (यजओने
छी) ।

नटी—एवेग^१ अजउत्तस दंसणेण सप्पसाद-विविह-वअणोयणासेण^२ अ भीमम-गरबड-दुहिआ रुप्पिणी वव भअवदो सिरिकण्हस दंसण-वअण संविहाणेणाहं^३ हिबहिअआ संवुत्तम्हि । तदोअ^४ किम्पि ण सुमरिदुं भवामि । [एतेन आर्यपुत्रस्य दर्शनेन सप्रसाद-विविध-वचनोपन्यासेन च भीष्मनरति-दुहिता रुक्मिणीव भगवतः श्रीकृष्णस्य दर्शन-वचन-संविधानेन ५हं हृतहृदया संवृत्ताऽस्मि । ततश्च किमपि न स्मर्तुं प्रभवामि ।]

सूत्र०—(क्षणं विचिन्त्य स्मृतिमभिनीय च साऽतिहर्षम्) प्रिये ! प्रायः प्रिय-जन सान्निध्यं^५ सर्वकार्यसाहचर्यमाचरति, यता भवत्या ईदृशेनापि दृष्टान्तोपन्याससहित-वाग्बिधानेन यत् पूर्वं, पल्लीकुल प्रवर्तनैक-

नटी—आर्यपुत्रक एहि दर्शनं सै तथा प्रसन्नतापूर्वक अनेक गप्प-सप्प सैं भग-वान् श्रीकृष्णक दर्शन वचन ओ क्रिया सै राजा भीषमक पुत्री रुक्मिणी जकां हम हरण भेल हृदयवाली भय गेल छी । ते किछु मोन पड़वा मै समर्थ नहि होइत छी ।

सूत्र०—(किछु काल सोचि मोन पड़वाक अभिनय कय अत्यन्त प्रसन्नता सै) प्रिये ! प्रायः प्रिय व्यक्तिक समीप भेला सै सभ काज मे सहायता होइत छैक कियेक त अहाँ एह प्रकारक दृष्टान्त युक्त वचनक धिन्यास सैं (मोन पाड़ि देखुं अछि ।) जे पहिने, 'पलिवार मूलग्रामक प्रारम्भ करवा मे एकमात्र ब्रह्माक अवतार—छबो अङ्ग चारु उपाङ्ग ओ रघुस्य सहित त्रयीविद्या (वेद) मे पारङ्गत—सद्विज्जन यशोवन्तक आचरण करैत—भृगुमुनिक सद्बोध—भीमान् भृगुदेवक बंशमे उत्पन्न, कविसमुदायक भूषण श्रीकृष्णपति उपाध्यायक पुत्र, वत्सगोत्रीय श्री-रमापति शर्मा छात्रलोकनिक प्रार्थना पर उत्सुकतावश नवीन 'रुक्मिणी-

१—एविण—'क' 'ख' । २—वलनासेण—'ख' । ३—संविहाणेहं—क ख । ४—तदोअ—क ख । ५—सान्निध्यमेव कार्य—'ख' ।

कमलासनावतार-साङ्गोपाङ्ग-सरहस्य-प्रयोनित्वात् - सततसमाचरित-वेतानव्रत-भृगुमुनिप्ररूप-श्रीमद्भृगुदेववंशोद्भवेन कविकुलालङ्कार-श्रीकृष्णपरशुपाध्याय तत्त्वजन्मना वत्सगोत्रेण श्रीमद्रमापतिशर्माणा छात्रादिभिरस्पर्धमानेन कतुहलादभिनयं रुक्मिणीपरिचयं नाम रूपकं द्रष्टव्यमभिनिर्माय चिरतरसेवनोपजात-दयावशाद् विविध-नाटका-दिपाठशैलेषु अस्मदादि भारतेष्वन्तेवासिषु समर्पितमासीत्, तदधुना स्मृतवानस्मि ।

नटी—मएवि दाणिं सुमरिदं तं । सअलअण-सलाहणीए तस्सि करस ण अणु-राओ हुविससदि । ता सुट्ठ एवं । [मयापि इदानीं स्मृतं तत् । सकल-जन-सलाघनीयेतरिस्मिन् कस्य न अनुरागो भाविष्यति ? तत् सुट्ठ एतत् ।]

सूत्र०—तदाऽस्य भूपाल-निबहावतंसस्य पूर्वेषां 'गुणपरिचयो' प्रथममाख्यातु भवती ।

नटी—वाङ्म । [अवहट्ट--गीतिः]

तवक सत्थ समुद णाविअ चन्दवइ-सुअ पण्डिओ ।

राअ वग समग अचिउद पाअ पङ्कअ मण्डिओ ॥

परिचय नामक रूपक (दृश्यकाव्य) छट दय वनाय बहुत दिनक सेवार्ता उत्पन्न श्यावश, अनेक नाटकादिक पाठ कयनिहार अस्मदादि (हमरा-लोकनि) नट ओ शिष्यसभकेँ समर्पित कयने छलाह - सै एखन में न पाइल अछि ।

नटी—हमरहु एखन से मोन पड़ल । सभाओकक द्वारा प्रशंसित ओहि नाटक मे ककरा ने अनुराग होयरीक ? ते ई उराम अछि ।

सूत्र०—तखन राजालोकनिमे अस्कार स्वरूप हिनक (नरेन्द्रसिंहक) पूर्वपुरुष-सभक गुण ओ परिचय पहिने कइ अहाँ ।

१—किञ्चिदुत्पन्नपरिचयो—'ख' ।

जस्स जेट्ठो बूह भइ बड्ठो बूह दमोअर सोअरो ।
 मच्चलोअ महेस सरिस महेस ठक्कुर णरवरो ॥
 सक्क कव्व कलामु^१ णिउणो तीअ तनअ सुहृअकरो ।
 सत्थ अत्थ समत्थ सअल विपक्ख पक्ख भअड्करो ॥
 तसु सुओ पुरिसोत्तमो जसु णाम तिहुअण सोहई ।
 जोअ हीरअ खाणि लुण्ठण कित्ति भूसण^२ मोहई ॥
 तसु कणिट्ठ वरिठ्ठ-भूवइ धम्म-भूसण सुंदरो ।
 विण्हु-भत्ति-पराअणो मिहिलाधालित्ति पुरंदरो ॥
 महिणाह-सीहो तसु सुओ अरितिमिर खण्डन दिनअरो ।
 दुविअ^३ णरवइ भूवई सिवचरण सरसिअ महअरो ॥

नटी—अवश्य. अवश्यम् । [अवहट्ट-भाषा मे गीत]

तर्कशास्त्र^१-समुद् नाविक चन्द्रपति-सुत पण्डिते ।
 राजवर्ग समग्र अचित्त^२ पादपङ्कज मण्डिते ॥
 जेठ जनिके बूढ भाए बड्ठ बुध^३ दामोदर सोदरे ।
 मर्त्यलोक-महेश^४ सद्यः महेश ठाकुर नरवरे^५ ॥
 सर्वे काव्य कला मे निपुणे तनिक तनय^६ शुभङ्कुरे ।
 शस्त्र अस्त्र समर्थ सकल विषय पक्ष भयङ्कुरे ॥

टिप्पणी--

१—तर्कशास्त्रकपी समुद् मे खेवैया (महेश ठाकुर) चन्द्रपति ठाकुरक पुत्र ।
 २—सकल राजा सौ पूजित धरणकमल सौ शोभित । ३—महापण्डित दामोदर
 ठाकुर । ४—मर्त्यभवनक महादेवक समान । ५—श्रेष्ठ व्यक्ति । ६—तनिक
 पुत्र शुभङ्कुर ठाकुर ।

१ - रह - 'क' । २ - कलाम्बु - 'क' 'ख' । ३ - भुअल - 'ख' । ४ -
 बीअ णरव भुवई - 'क' 'ख' ।

तस्स^१ राहुव सीह देओ महाराअ पअङ्गिओ ।
 जीअ आहुव-कम्म सव्व अरादि - भूवइ सङ्किओ ॥
 दाण णिन्दिअ बलि - महीबइ, तहा^२ कण्ण - णरेसरो ।
 सअल दिअवर कम्म तोसिअ जेण सिरि परमेसरो ॥
 तस्स सिरिल^३ णरेंद सीहो महाराअवरो सुओ ।
 जीअ भीम समान विवकम अरिभअंकर भुअजुओ ॥
 रह^४ तुरङ्गम हत्थि^५ बूह समत्थ अत्थहि दप्पिआ ।
 जीअ खग अमित्त - वग्ग समग्ग समग्ग^६ समप्पिआ ॥

तनिक सुत पुरुषोत्तमे जनिक नाम त्रिभुवन सोभए ।
 जनिक हीरक-खानि^७ लुण्ठन कीर्त्ति भूषण मोहए ॥
 तनिक कनिष्ठ वरिठ्ठ-भूपति धर्म भूषण सुन्दरे^८ ।
 विष्णुभक्ति परायणे मिथिला धरित्रि-पुरन्दरे^९ ॥
 महिनाह सिहे तनिक सुत अरितिमिर^{१०} खण्डन दिनकरे ।
 द्वितीय नरपति भूपती सिवचरण सरसिज^{११} मधुकरे ॥
 तनिक राधवसिह देवे महाराज-पदाङ्किते ।
 जनिक आहुव^{१२}-कर्म सर्व अराति^{१३}-भूपति णङ्किते ॥
 दान-निन्दित^{१४} बलि-महीपति तथा कर्ण-नरेश्वरे^{१५} ।
 सकल द्विजवर^{१६} कर्म तोषित जाहि सिरि परमेश्वरे ॥

७—हीरक खान लुटबाक मश । ('आनन्दविजय नाटिका मे 'अहीर खानिक
 लुट्टिआ' ।) ८—सुन्दर ठाकुर । ९—मिथिला महीक इन्दु (राजा) । १०—शत्रु-
 रूपी अन्धकारक खण्डन करवा मे सूर्य । ११—महादेवक धरणकमलक भी-
 रायरूप नरपति ठाकुर । १२—गुह । १३—सकल शत्रु राजा सभ ।
 १४—दान सौ राजा बलि के निन्दित कय देल । १५—राजा कर्ण ।
 १६—ब्रह्मणक सभ कर्म (आधरण) कयधीपरमेश्वर के संस्तुष्ट कयल ।

१—रस्त - ख । २—रमण तहाँ - 'ख' । ३—सिरी - ख । ४—रेह - 'ख' ।
 ५—हाथि - 'ख' । ६—सगा - ख ।

[*तर्कशास्त्र - तपुद् - नाविकः चन्द्रपतिसुतः पण्डितः ।
 राजवर्ग—समग्राधितपादपङ्कज—पण्डितः ॥
 यस्य ज्येष्ठो वृद्ध-भ्राता बहुबुधो दामोदरः सोदरः ।
 मर्त्यलोक - महेशसदृशो महेशठक्कुरो नरवरः ॥
 सर्वकाव्य-कलास-निपुणो तस्य तनयः शुभङ्कुरः ।
 शास्त्राश्च - समर्थः सकल विपक्षपक्ष भयङ्कुरः ॥
 तत्सुतः पुरुषोत्तमो यस्य नाम विभुवने शोभते ।
 यस्य हीरक-खानि-लुण्ठन-कीर्ति-भूषणं मोहयते ॥
 तत्कनिष्ठो वरिष्ठभूपति धर्मभूषणः सुन्दरः ।
 विष्णुभक्तिपरायणो मिथिलाधरित्री-पुरन्दरः ॥
 महिनाथसिंहस्तत्सुतः अरितिमिर खण्डन-दिनकरः ।
 द्वितीयो 'नरपति' भूपतिः शिवचरण-सरसिज-मधुकदः ॥
 तस्य राववसिहदेवो महाराज-पदाङ्कितः ।
 यस्य आहव कर्मणा सर्वांराति-भूपतिः शङ्कितः ॥
 दान-निन्दितो बलिमहीपतिः तथा कर्णनरेश्वरः ।
 सकल द्विजवर-कर्म-तोषिणो येन श्रोपरमेश्वरः ॥
 तस्य श्रील नरेन्द्रसिंहो महाराजवरः सुतः ।
 यस्य भीम-समान-विक्रमः, अरिभयङ्कुरो भुजयुगः ॥
 रथ-तुरङ्ग-महस्तिधूयः समस्तार्थं दक्षिणः ।
 यस्य खड्गेन अमित्रवर्गः समग्रः स्वर्गं समर्पितः ॥
 (इति षष्ठीयम् ॥)

तनिक श्रील नरेन्द्रसिंहो महाराजवरः सुते ।
 जनिक भीमसमान विक्रमः, अरिभयङ्कुरो भुजयुगे ॥
 रथ-तुरङ्ग-महाधि धूयः समस्त अर्थहि दक्षिणे ॥
 जनिक खड्गेन अमित्र-वर्गं समग्रं स्वर्ग-समर्पिते ॥

१७—शत्रु के डरायमवला दुतु भुजः । १८—रथ, घोड़ा ओ हाथीक भुण्ड ।

१९—अभिमानि । २०—शत्रुक समूह के स्वर्गमे दय देल ॥

७ - (ई सरकत छाया किहु निम्नरूपे अपूर्ण 'क' पुस्तक मे अछि, 'ख' मे नहि ।)

सूत्र - प्रिये ! साधु, साधु ! सम्यक् परिचीयते शय्या एष महाराजः । तस्मात्
 सहैव मया मन्त्रोवासिभिश्च कुशीलवै र्गयितां सम्मगस्य गुणैवः ।
 नटी - भद्रं । [भात्रम् ।]
 (ततः सर्वे गायन्ति)

[गीतसं० - ४]

मैथिल भूपति सिंह नरेन्द्र ।
 जसु परतापे वक्ति भेल इन्द्र ॥
 खण्डवला कुल मणिमय दीप ।
 भुजबले जीतल सकल महीप ॥
 दाने सुरद्रुम नहि तसु तुल ।
 परजा - पालक घरमक मूल ॥
 जाचक मन दारिद्र्य दुरि नेल ।
 कीरति धवल वशाओ दिस भेल ॥
 सज्जन मन नव कञ्ज दिनेस ।
 जसे निन्दित बलि - कर्णनरेश ॥

(ई पदवाक बाही ।)

सूत्र—प्रिये ! बाह, बाह ॥ नीकजको अहाँ एहि महाराजके जनैत छियनि ।
 ते हमरा सांगहि ओ हमर शिष्य रती सभाक हिनक संग गुणसमूह के
 नीक जको पाउ ।

नटी—वेस ।

(तखन सभा केओ गवैत छथि ।)

गीतसं० - ४

भूपति = राजा जसु परतापे = जनिक प्रतापसँ । महीप = राजा ।
 सुरद्रुम = कल्पवृक्षा तसु तुल = तनिक तुलना मे । जाचक मन = याचक
 गण, मजनिहार । दारिद्र्य = दरिद्रता । कीरति = कीर्ति, वश । धवल

आन नृपति नहि तनिक ससान ।
सुमति रमावति कर गुणगान ॥

सूत्र०—एवमेतत् । किञ्च सोऽयं नृपो येन,
विजित्य शत्रुं सबलं महानुजं^१
भ्रष्टाऽपि^२ लब्ध्वा मिथिलापुरी पुनः ।
प्रमथ्य चैद्यादि-नृपं सहविमणं^३
धीवांसुदेवेन विदर्भाजा^४ यथा ॥४॥

(नेपथ्ये साक्षेपम् :—अगः पापं लूपाधम ! मयि जीवति धनुषपाणी^५
कोऽसौ गोपालाऽपसकः कृष्णो मदभिमिनीं हविमणीं परिणोषति, जरा-
सन्ध-प्रभृतिभिर्महारथिभिरनुगम्यमानं चैद्यराजं वा विजेष्यते ? शृणु,
वृथोदाहरण-पञ्चाटक-कुनाट्यप्रवर्त्तिक-चरणाऽपसक !

—उज्जर । नव कलज = नवीन कमल (सज्जनक मनरूपी) क हेतु ।
दिनेस = सूर्य । जसे = यश सौ ॥

सूत्र०—ठीक । आ ई उवेह राजा धिकाह जे—

शत्रु के ओकर छोट भाय ओ सेना समेत जीति हाथ सौ गेलो
मिथिला नगरी के पुनः प्राप्त कयलनि, जेना श्रीकृष्ण चेदिराज
शिष्टपाल के स्वामीक समेत मारि के हविमणी (विश्वराजक
पुत्री) के प्राप्त कयलनि ॥४॥

(नेपथ्य में आक्षेप सहित :—अरे पापी अधम नट ! धनुष हाथ में लेने
हमरा जिवैत के ओ नीच गोपाल कृष्ण हमर बहिन हविमणी सौ विवाह
करत अववा जरासन्ध आदि महारथीलोकनि सौ अनुगत (युक्त) चेदिराज
शिष्टपाल के जीतत ? सुनह व्यर्थ उदाहरणक श्लोक पढ़निहार निन्दित
नाट्यक प्रारम्भ कमनिहार अधम भोंट ।

१—स चानुजं—'ख' । २—प्रलब्ध—'ख' । ३—जिव—'क ख' ।

४—वन्धवालो—'क' । ५—वृथोदाहरण—'ख' ।

एकेनैव जरासुतेन समरे भाङ्गं समासाद्य यो ।
गोपालो मधुरां विहाय क्षरणं प्रत्यक्समुद्रं गतः ।
सोऽयं सम्प्रति सर्वभूष-निवहै युक्तं हि चैद्याधिपं
जिह्वा प्राप्स्यति हविमणीमिति कथं मुहुः ! प्रतीतं त्वया ॥५॥)

सूत्र०—प्रिये ! कथमयं भूभङ्गं भीषणललाटतट-सौलग्न-कोपारक्तनयन दुनिरी-
क्ष्य-मुखमण्डलः तज्यंश्चिन्तय दृष्टिपातेनैव नः^१ सर्वान् भर्तृदारको स्वमी
स्वमद इत्यपि परिभाषया ह्वातोऽनुजं भ्रातृभी स्वमरथादिभिरनुगम्य-
मान इति एवाऽऽगच्छति । मद्वाण्या चाऽयं सञ्ज्ञातकोप इवेत्यवग-
च्छामि । तस्मादस्माकं कृपितस्यास्य पुरतोऽवस्थानमयुक्तमेव ।

(इति निष्क्रान्तौ)

॥ इति प्रस्तावना ॥

एसकरे जरासन्ध सौ युद्ध में हारिके जे गोपाल मधुराके
छाड़ि पश्चिम समुद्रक क्षरण में गेल, में ई एखत सकल राजाक समूह
सौ युक्त चेदिराज शिष्टपालके जीति हविमणीके प्राप्त करत—रे मुख !
एहि बात पर तो कोना विश्वास कयले ? ॥५॥)

सूत्र०—प्रिये ! की ई भोंहके टेढ़ कयला सौ जरासन्ध कपारक कात (नीचा) में
लागल कोथे लाल आखिरौ कठिनतापूर्वक देखवाक योग्य मुंहबला,
देखले उदार हमरासभ के डँटेत जका युवराज स्वमी स्वमद नामे
सेहो प्रसिद्ध स्वमरथ आदि छोट भाय-सभ सौ अनुगत एम्हरहि अवैत
छथि । हमर बात सौ ई क्रुद्ध भेल सन लगैत छथि ते कोधित हिनक
सोझा में हमरालोकनिक रहब ठीक नहि ।

(बहार होइत छथि ।)

॥ इति प्रस्तावना ॥

१—मस्तर्वात्—'ख' ।

अथ प्रथमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति यथा निर्दिष्टो रवमरथादिभ्रातृभिः । रिवृत्तो रवमी)

[गीतसं०-५]

रकुमर कुमर वैल परवेश । कोपित वदन भयंकर भेष ॥
कुटिल^१ भोह संकुचित ललाट । रण अति निरभय हृदय-कपाट ॥
बान कमल विराजित हाथ । परिजन सहित सहोदर साथ ॥
कुण्डल केयूर वलय विसाल । उर सोभ अनुपम मुकुता-माल ॥
हरि मुनि लोचन कोपे^२ कषाय । बहूत नृपति रह हुनिक सहाय ॥
तसु दुश्मति जग के नहि जान । अभयव मुमति रमापति भान ॥

रवमी—(“आः पापे” इत्यादि [दलोकसं० ५ पद्यगत] पठित्वा) वत्स ! रवमरथ !
नव गयोऽसौ दुराशयो भरतात्मजः ?

प्रथम अङ्क

(तत्पुन रवमरथ प्रभृति भायलोकनि सौ घेरल रवमी पूर्वनिर्दिष्ट रूप मे प्रवेश करैत छथि ।)

गीतसं-५

रकुमर कुमर = राजकुमार रवमर (रवमी) । परवेश = प्रवेश । कोपित वदन = तमसायल मुँह । कुटिल = टेढ़ । संकुचित ललाट = धौंकचल वा तनल कपार । अतिनिरभय = अतिशय निर्भीक हृदयस्थी केवाहुवला । परिजन = परिवार । केयूर = बाँहिक महुना । वलय = माठा । उर सोभ = छातीपर शोभित । अनुपम = अकर उपमा नहि हो । मुकुता-माल = मोतीक माला । हरि = कृष्णक नाम । कषाय = मेरुआ रंगक । नृपति = राजा ।
रवमी—(“आः पाप” इत्यादि दलोकसंख्या ५ तक पढ़ि) बौआ रवमरथ !
कतय गेल ओ दुष्ट नट ?

१ - कुचित - 'क' ।

रवमरथ—अज्ज ! भवदो दंसण-णिमित्तकेण^१ ज्जेव पळाइदो । ता णिवत्ति-
अदु अज्जो । [आर्य ! भवतो दशननिमित्तकेन अश्वेव पला-
यितः । तस्मिन्वर्तताम् आर्यः ।]

रवमी — (किञ्चिन्निवृत्त्य) वत्स ! अतिविप्रियवाक्यश्रवणात् संवृद्धिताऽम-
पौऽहं सोढुं न शक्नोमि । अतो मद्वचनात्^२ सुतमाज्ञापय यथा
जटित्येव मदर्थं सज्जीकृत्य आनयतु अहमप्यस्वागारं गत्वा यावद्
आयुष्याम्यादाय सन्तुष्टः सवो भवामि ।

रवमरथ—(सप्रथममञ्जलि वदन्वा) अज्ज, अज्ज ! सम्पद^३ एदं ण सोहणं^४
कस्सयि जाचअ-अणस्स यअणेण विपक्ख-णअरं गयुअ तहाविहेण^५
रिउणा समं समलकम्म-समुज्जओ । ता^६ कोहं संहसिअ उअ-
विसदु अज्जो, तदो मन्तइस्सं । [आर्य आर्य ! साम्प्रतमेतन्न
शोभन कस्यापि याचकजनस्य वचनेन विपक्षनगरं गत्वा तथावि-
धेन रिपुणा समं समरकर्मासमुद्योगः । तत् कोधं संहस्य उपविश-
त्वार्यः तदा मन्त्रयिष्ये ।]

रवमरथ—आर्य ! अपनेक दर्शनक कारणे एखनहि पड़ाएल । ते आर्य पुरि
जाउ ।

रवमी- (कनेक घरेत) बौआ ! अति अग्रिय बात सुनला सौ कोध बढवाक
कारण हम सहि नहि मकैत छी । अतः हमर वचन स सारबिके आज्ञा दएह
जे भटवय हमर रथके सजाय आनओ हमहूँ यावत् अस्त्रागार जाय सस्य
लय कवच पहिरि तँयार होइत छी ।

रवमरथ—(नम्रता सहित कल जोड़ि) आर्य, आर्य ! एखन ई नीक नहि होयत
जे कोनो भिखमंगाक वचन सौ धिरोधीक नगर जाय ओहन शक्क
संग मुठक तँयारी करी । ते कोध के समेटि आम बैसल जाओ,
तखन परामर्श करब ।

१ - वसणे सेतु केन - 'क', दं. ने भेष केन - 'ख' । ३ - खत 'क', सेनापति (सेत)
'ख' । ४ - तुहारिकेहण - 'क', तुहारिहेण - 'ख' । ५ - स + 'क',
'ख' ।

रुक्मी - दया रोषते वत्साय । (इति समुपविश्य) वत्स ! श्रूयताम् :-

[गीतसं०-६]

भीष्म नृप सुत हमे युवराज ।
हम सज्जो कओन करत रण काज ॥
जखने धरिअ हमे करे सरचाप ।
तहिणने बासे वैरिण काय ॥
सर सन्धान हम पुनि देखि ।
रणभूमि छाड़्य अस्त्र उपेखि ॥
सोम जरासुख नृप भिक्षुपाल ।
हमर सवक्ष सकल महिपाल ॥
युद्ध-विसारव धिक सवे भाय ।
हम जानिअ सब अस्त्र उपाय ॥
पौछव हमर भुवन सवे जान ।
अभिनव सुमति रमावति भान ॥

रुक्मरथः—अज्ज ! एवमेवं, सहासि दाणि ज्जेव विगहो ण जुसो जइ सो
रुक्मिणी बलवकारेण उवाहुरस्सदि तदो जहा अज्जेण विदं तथा

रुक्मी—जे बीबाके नीक लागय । (बैसि) बीबा सुतः—

गीतसं०-६

भीष्म नृपसुत = राजा भीष्मक पुत्र । सज्जो = सै । रण = युद्ध । सर-
चाप = बाण ओ धनुष । बासे = बसे । वैरिण = दुश्मन सभ ।
सर सन्धान = बाणक निशाना । उपेखि = उपेक्षा कर्ण, छोड़ि । सोम =
सोमशक्त पुत्र । सपक्ष = समान बलबला । महिपाल = राजा । युद्ध-
विसारव = युद्ध करवा मे कुशल । अभिनव सुमति = नवीन 'सुमति'
उपाधिबला । (प्राचीन 'सुमति' उमावति छलाह) ।

रुक्मरथ—आर्ये ! ई यथार्थ अछि, तथापि एखनहि युद्ध ठीक नहि । यदि ओ
रुक्मिणी सँ बलपूर्वक विवाह करत तँ तखन जेना आर्य कहल अछि

१-य ओ = 'ज' । २-अमरास्थ-क । ३-एवमेवं-क ख ।

कदम्ब । अवि^१अ अज्ज सुदं मए कञ्जुई-मुहायो, 'पहादे'^२ महाराओ
देवीए कुमारेणा वि समं सुविआरिअ सअम्बरुज्जोअं करिस्सदि स्ति ।
ता अज्जो वि बीसमिअहु दाव । [आर्ये ! एवमेवेदं, तथापि इदा-
नीमेव विग्रहो न युक्तो यदि स रुक्मिणी बलवकारेण उवाहुरिय्यति
तदा यथा आर्थेण वृत्तं तथा कर्त्तव्यम् । अपि च अद्य श्रुतं मया
कञ्चुकीमुखात् यत् प्रभृते महाराजो देव्या कुमारेणापि समं सुवि-
चार्यै स्वयंवरोद्योगं करिष्यति । तद् आर्योऽपि विश्राम्यतु तावत् ।]

रुक्मी—अथस्वेवम् को वाज्य दोषः ? (इति विश्रामं दाटयति ।)

(ततः प्रविशति राजा)

[गीतसं०-७]

भीष्म नृपति देल परवेस ।
जनि कुण्डनि^३ अवतरल सुरेस ॥
मणिमय मुकुट विराजित^४ माथ ।
जनि उदयाचल उगु दिननाथ ॥
कनक-दण्ड सित-छत्र अमोल ।
विमल धवल दुइ चामर झोल ॥

तहिना करख । आओरो, आइ हम सुनल अछि कञ्चुकीक मुह^५ जे
भितसरखन महाराज देवीक (महाराणीक) संग ओ कुमारोक (अहूक)
संग नीकजका विचारि स्वयंवरक उद्योग करताह । ते आर्यो तावत्
विश्राम कयल जाओ ।

रुक्मी—एहिना होअओ । एहि मे कोन क्षति ? (विश्राम करवाक अभिनय
करै छथि ।)

(तखन राजा प्रवेश करै छथि ।)

गीतसं०-८

नृपति = राजा । कुण्डनि = कुण्डिनपुर मे । सुरेस = इन्द्र । दिननाथ =
सूर्य । कनक दण्ड सित छत्र = सोनाक डंडा सँ युक्त उज्जर छाता ।

१-विआ अव-क; वि अय-ख । २-पहादे-क ख । ३-य = बाल = ख ।

४-कुण्डलि-क । ५-विभूषित-ख ।

परजापति सम पञ्जापाल ।
तस कर देख निखिल^१ भूपाल ॥
वैरविनास किनास समान ।
सतत करथि षोडस महादान ॥
हरिपदाङ्गुल वरथि धेआन ।
मुमति रमापति कर गुणगान ॥

राजा—कः कोऽयं भोः !

दौवारिकः—(प्रविश्य शिरसा प्रणम्य) एसोहि, आणवेदु महाराजो ।
[एषोऽस्मि, आज्ञापयतु महाराजः ।]

राजा—कञ्चुकिनं शीघ्रमानय ।

दौवारिकः—ज देओ आणवेदि । [यद् देव आज्ञापयति ॥ (इति निष्क्रम्य
पुनः कञ्चुकिना सह आयातः ।)]

(ततः प्रविशति कञ्चुकी)

कञ्चुकी—(आश्मानं निर्वण्य जरावेनलब्धं नाटयति):—

अमोल = अमूल्य । विमल धवल = निर्मल एव उज्जर । चामर =
चैवर । परजापति = बह्मा । तसु = तनिका । कर = राजस्य (टेकस) ।
निखिल = सम । वैरविनास = शत्रुक नाश कयनिहार । किनास =
किन्नरेश, कुवेश ॥

राजा—कयो एतय अछि ?

दौवारिक—(प्रवेश कय, माथि धुकाय प्रणाम कय) इयेह हम छी । आज्ञा
देल जाओ महाराज !

राजा - कञ्चुकी केँ जरदी वजाबहु ।

दौवारिक - जे सरकारक आज्ञा । (वहार भय कञ्चुकीक संग आपल ।)

(तखन कञ्चुकी प्रवेश करैत छथि ।)

कञ्चुकी - (अपनाकेँ लोक जकाँ देखि बुढ़ारीक दुःखक अभिनय करैत छथि)

[गीत सं० - ८]

हमे कञ्चुकि नयसागर नाम ।
नृप अभिलषित करिअ सभठाम ॥
कास-कुसुम तह उज्ज्वल कोश ।
सबतर^१ सबकेँ दिअओ उपदेश ॥
जराजो^२ विवळ अतिकम्पित देह ।
पद देइते^३ पथ होअ सन्देह ॥
सवन विलोचन मन्धर भेल ।
ई अविकार तइअओ नहि^४ गेल ॥
कर सोभे निरमल रजतक दण्ड ।
सतत रहिअ हमे अन्दर - खण्ड ॥
सबहु काज हमरा अवधान ।
हरिपद प्रणत रमापति भान ॥

(निपुणं निरूप्य) एष महाराजः सिंहासनमलङ्करोति । तदुपसर्गमि ।
(इत्युपसृत्य) जयति जयति महाराजः । महाराज ! किमर्थमाहूतोऽस्मि ?

गीत सं० - ८

नृप अभिलषित = राजाक जे इच्छा । कास कुसुम = राड़ीक फूल
सन । सबतरि = सभ ठाम । जाराजो = बुढ़ारीसँ । पद = पएर ।
पथ = रास्ता पर । सवन = वान । विलोचन = आँखि । मन्धर =
क्षीण शक्ति । ई = कञ्चुकीक । रजतक = चानीक । अन्दर खण्ड
= अन्तःपुर । अवधान = ज्ञान ॥

(नीकजकाँ देखि) इयेह महाराज सिंहासन केँ शोभित करैत
छथि । त लग जाइत छी । (लग जाय) महाराजक जय हो । महाराज !
कोन काज लय वजाओल अछि ?

राजा - नयसागर ! रुक्मिण्याः परिणयार्थं देवी मां प्रति कुपितैव तिष्ठति ।
अतस्तदविचारणार्थं तां सम्प्रसाद्यानयेति ।

कञ्चुकी - यथाऽऽज्ञायति महाराजः । (इति निष्क्रम्य अन्तःपुरं गतः । देवी-
समीपं गत्वा) देवि ! रुक्मिण्याः पाणिग्रहार्थं देव्या सार्व महाराजः
किमपि मन्त्रयिष्यति ततो देवी द्रुतमानयेत्यहमनुष्ये पितः । तेन
देव्या तत्समीपगमनमधुनेव विधेयम् ।

देवी - अञ्ज नयसागर ! मए बारंबारं अम्भस्थितो वि महाराजो न लज्जेदि,
तयो कथं तत्त्व^१ गन्तव्यं । [आर्यं नयसागर ! मया बारंबारमभ्य-
थितोऽपि महाराजो न लज्जते, ततः कथं तत्र गन्तव्यम् ?]

कञ्चुकी - तथाप्येकवारं पुनरपि तत्र गमनमेव देव्याः श्रेयस्करम् ।
देवी - अञ्ज रस वचनं कथमन्यथा कर्तव्यं, ततो गमिष्यामि ।

[आर्यस्य वचनं कथमन्यथा कर्तव्यं, ततो गमिष्यामि ।]

(ततः प्रविशति पटीक्षेपेण कुमारिकया सह देवी)

राजा—नयसागर ! रुक्मिणीक विवाहक हेतु महारानी हमरा पर तमसायल
जका छथि । अतः तकर विचारक हेतु हुनका प्रसन्न कम आनह ।

कञ्चुकी—जे महाराजक आज्ञा । (बहार जाय झौड़ीक भीतर गेलाह । देवीक
लग जायके) महारानी ! रुक्मिणीक विवाहक हेतु अपनेक संग
महाराज किछु परामर्श करलाह । ते 'देवीके' (अर्थात्) जल्दी
लावह -- ई कहि हमरा समीप पठओलनि अछि । अतः देवी
(अर्थात्) हुनक समीप एहिखन चली ।

देवी—आर्य नयसागर ! हम बेरि बेरि महाराजके एहिलेल प्रार्थना कयलियनि,
तयो ओ नहि लज्जित होइत छथि, त कोना ओतय जाड ?

कञ्चुकी—तेपो एक बेरि फेरो ओतय देवीक जएथे नीक होयत ।

देवी—अपनेक वचन के कोना टारि सकैत छी, तें जायब ।

(तखन प्रवेश करैत छथि परश हटाम कुमारीक संग देवी)

१ - तत्त्व गमन - ख । २ - तस्यागन्तव्यं - क ख । ३ - गमिष्ये - क ख ।

[गीत सं०-२]

आधि मलीन दीन तनु भेस ।
श्रीषमनृप - महिषी परवेस ॥
अविरल लोचन गर जलधार ।
कुवलय बल जनि मुञ्च तुषार ॥
आनन दिवस - सुधाकर तूल ।
कुञ्जल चिकुर अतिमलिन दुकूल ॥
मणिमय सकल विभूषण काङ्कि ।
भूपति निकट भेलि गए ठाङ्कि ॥
तनया देखि देखि मने भाख ।
समुचित वर कारने अबिलाय ॥
हरि तेजि चित्त धरथि नहि आन ।
रानी रूप रमापति भान ॥
खण्डवलाकुल सागर चन्द्र ।
रस बुझ रसमय सिंह नरेन्द्र ॥

अपि च-

[गीत सं० - १०]

गमने धिनिन्द मरालक नारि ।
संगे जननि बसु राजकुमारि ॥

गीत सं० - ९

आधि = दुःख सौ । दीन तनु = गरीब सनक देहक वेश । महिषी = पट-
रानी । अविरल = धारामवाह । लोचन गर = आँखि सौ चबैत अछि । कुवलय
बल = कमलक पत्ती । मुञ्च = छोड़ैत अछि । तुषार = बर्फ, पाला । आनन =
पुँह । दिवस-सुधाकर = दिनुका चन्द्रमाक सन । चिकुर = केश । दुकूल = वस्त्र ।
काङ्कि = उगारि । भाख = माँथ धुनेत छथि । हरि तेजि = कुण्डके छोड़ि ॥
आओरो ..

गीत सं० - १०

गमने = चालि सौ । मरालक नारि = हँसीके । जननि = मायक । नख-

नख - रुचि गञ्जित नूतन चन्द ।
 चरणे धिलज्जित धल - अरविन्द ॥
 करिकर पात्रे न ख - जुग भास ।
 ते गिरि कन्दर करय निवास ॥
 विपुल नितम्ब, मध्य कटि खीन ।
 करतल अरुण - कमल छवि जीन ॥
 भुजपुग कनक - मृणालक तूल ।
 कम्बु कण्ठ, नासा तिल - फूल ॥
 अधर विनिन्दित बिम्ब प्रवाल ।
 कुन्द - कोरक सम दमन विशाल ॥
 लय लज्जन - युग उग हिमघाम ।
 तजो तस आनन दीअ उपाम ॥
 वामर नहि तसु चिकुर - समान ।
 रुकुमिति - हा रमापति भाव ॥

राजा - अयि प्रिये ! इहेवासने समुविश्यताम् ।

रुचि = नहक चमक सँ । गञ्जित = तिरस्कृत । चरणे = पावर सँ । धल अरविन्द
 = धल कमल । करिकर = हाथीक सूँड़ । खजुग = दूत जीव । गिरिकन्दर
 = पर्वतक गुहा में हाथी निवास करेछ । विपुल = विशाल । मध्य = देहक
 बीच में । कटि = हाँर । खीन = क्षीण, पातर । करतल = तरहत्थी । अरुण =
 लाल । छवि = सन्दरता । जीन = जीतेव अछि । भुजपुग = दुतूँ सोही सोनाक
 कमलतालक तुल्य । कम्बु = शंखक समान । नासा = नाक । बिम्ब = तिलको
 इक फड़ ओ भूँगा (प्रवाल) । कोरक = कली । दमन = दाँत । हिमघाम =
 चन्द्रमा । चिकुर = केश ॥

राजा - अए प्रिये ! एतहि आसन पर बैसु ।

देवी - (दीर्घ निःश्वस्य) महाराज ! जाव रुक्मिणीए परिणयो न भोदि, कथ
 आसणे उअविसहि दाव ? [महाराज ! यावद् रुक्मिण्या परिणयो
 न भवति कथमासन उपविशामि तावत् ?] (इति भूमावुपविशति ।)

राजा - प्रिये ! दुहितु विवाहे अन्त्याः प्राधान्यम्, अतो देव्याः कीदृशो निमर्शः ?

देवी - पाह ! अह्माणं विचारेण कि एत्थ, जदो कुमारिआ-पल्लिये जणओ जहा
 करेदि तहा भोदिति । [नाथ ! अस्माकं विचारेण किमत्र, यतः कुमा-
 रिका परिणये जन्तो यथा करोति तथा भवतीति ।]

राजा - प्रिये ! देव्या यो वरोऽभिलषितो मयाऽपि स एव विधेयः । अयमत्र, यत्र
 कर्मकाजन्त्याः कुत्सितवरे पक्षपातस्तत्रैव जनकस्य स्वेच्छा । न खलु
 भवादृश्याः कुत्सितवरे पक्षपातशीला भवन्ति । तस्मात् स्वविमर्शमावे-
 दय ।

देवी - (उत्थयाम साधु पातं सपश्यं गीतेन आवेक्ष्यति :-)

[गीतसं० - ११]

भूपति ! अवहुं करिअ सुनिचार ।

दुहित-परिनय तोरित करिअअ, अनिअ घटक कुमार ॥ ध्रु० ॥

देवी - (पेच सौंख्य लय) महाराज ! यावत् रुक्मिणीक विवाह नहि होइत अछि
 तावत् आसन पर कोना बैसु ? (भूमिअहि पर बैसैत छथि ।)

राजा - प्रिये ! बैठीक विवाह मे माइक प्रधानता होइछ । अतः देवीक केहन
 विचार अछि ?

देवी - प्राणताथ ! हमरा विचारे एहिमे की, कियेक तँ कुमारिक विवाह
 मे पिता जेना करथि तहिना होइछ ।

राजा - प्रिये ! देवीके जे वर इष्ट छथि, हमरहु सएह कसँव्य छथि ।

दोसर बात, जाहिना कन्याक माइक अछलाह वर पर पक्षपात
 रहैत छति ओतहि पिता स्वेच्छाचारी होइत छथि । मुदा, अहाँ
 सम माए अछलाह वर में पक्षपात नहि कय सकैत छथि । तँ अपन
 विचार कह ।

देवी - (ऊँठि तोर खगैत विनयपूर्वक गीतद्वारा आवेक्षित करैत छथि) :-

राजकाज तेजि अति सखिनय भय, नेओतिथ नृपति - कदम्ब ।
 सहज कुटम्ब सँवोधि समति लिज, आवे न उचित विलम्ब ॥
 रूपेँ शीलेँ कुलेँ विक्रमेँ आगर-नागर गुणक निधान ।
 से वर अपने मने अनुमानिअ, ताहि पुछव के आन ।
 कुतनय दुरमति चितेँ जनु राखिअ, भाखिअ जनु किछु मन्द ।
 तेँ परिपाटि विवाह निवाहिअ, जाहि बाढ़ नहि दन्द ॥
 कूमरि हमरि जलधि-दुहिता सनि, 'बएस' वरप दस साहि ।
 हरखि निवेदिअ सकल-कला-वस', नारायण सम जाहि ॥
 तुअ अभिलमिअ सकल परिपूरत, न करिअ हृदय मलान ।
 रुकुमिनि देव पति होयत श्रोपति, सुमति रमापति भान ॥

राजा—ममाऽप्येतदेवाऽभिमतं, किन्तु तद्दूत-सकलगुणाधरो वरो मया विचारितः । स देव्याऽपि श्रेष्ठः—

दुष्टानी निघनाय सम्प्रति भूयो भाराऽवनाराम यो
 रक्षामे विदुषां सतां त्रिभुवनबाणाय लक्ष्मीपतिः ।

गीत सं-११

दुहिता-परितय = बेटीक विवाह । तोरित = शीघ्र । नृपति-कदम्ब = राजाक समुदायके । शँवोधि = सम्बोधन कय । समति = सम्मति । विक्रमे = वीरता शी । कुतनय = कुपुत्र (स्वमी) । मन्द = अधलाह कथा । दन्द = दम्ब, सगड़ा । कूमरि = कुमारी । जलधिदुहिता = समुद्रक पुत्री लक्ष्मी । मलान = दुःखी । श्रोपति = कृष्ण ।

राजा—हमरहु ब्येह विचार अछि, किन्तु ओहन सभ गुणक आश्रय वर हम विचारते छी । से देवियो सुनल जायः—

जे दुष्ट सभक मृत्युक हेतु, एखन पृथ्वीक भार उतारवाक लेल, विद्वानक रक्षाक हेतु ओ तीन लोकक रक्षाक हेतु लक्ष्मीपति श्रीविष्णु यावज-वर्षा मे वसुदेवक घर मे जन्म लेलनि अछि, सएह समस्त पापक नाश कय-

सम्भूतो वसुदेव-येशमनि यदो वंशे समस्ताऽवहा

श्रीकृष्णो मथुरापुरे विजयते जामातृयोग्यो वरः ॥६॥

देवी—महाराज ! रुक्मिणिए सरिसो वरो मए बि सो णिछबिओ, जइ एत्थ आगबिससदि । [महाराज ! रुक्मिण्याः सद्दूतो वरो मयापि स विष्णु-पितो यद्यथाऽऽगमिष्यति ।]

राजा—तहि गच्छतु देवी रुक्मिण्या सहाऽन्तःपुरम् । मयापि कुमारमाहूय कियते स्वयंवरार्थमुद्योगः । सदा सकल-राजन्य-मण्डले निमन्त्रणीये यादवानामपि निमन्त्रणं कुमारस्यानुमतमेव भविष्यति । ततो भक्तवत्सलतया अन्तर्यामि भगवान् आगमिष्यत्येव ।

देवी—जं आगवेदि णाहो तहा करेम्ह । [यदाज्ञापयति नाथस्तथा कुर्मः ।]
 (इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

॥ इति रुक्मिणीपरिणये राज्ञोसमाश्वासनं नाम प्रथमोऽङ्कः ॥

निहार श्रीकृष्ण अमाय करवाक योग्य वर मथुरा नगर मे विजय प्राप्त कय रहल छथि ॥६॥

देवी—महाराज ! रुक्मिणीक समान वर हमरहु ज्येह सूर्जत छथि जं ओ एत्थ आबथि ।

राजा—तखन देवी (अहाँ) रुक्मिणीक संग अन्तःपुर जाय । हमहूँ कुमारकेँ बजाय स्वयंवरक हेतु खोजा करैत छी । तखन सभ क्षत्रिय-लोकनिकेँ निमन्त्रण देवाक प्रसंगमे यादवो लोकनिकेँ निमन्त्रण देव कुमारोक (स्वमीक) सम्मते होयत । तकर बाद भक्त पर स्नेहरत्नवाक काशण अन्तर्यामी (मनक बात बुझनिहार) भगवान् श्रीकृष्ण अवयवे करताह ।

देवी—जे अनेक आज्ञा से करैत छी ।

(सभ बहार भय गेल)

रुक्मिणीपरिणय मे 'रानीकेँ घेरा देव' नामक पहिल अङ्क समाप्त भेल ।

अथ द्वितीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति राजा कञ्चुकी च)

- राजा— नयसागर ! आहूयतां कुमारः ।
 कञ्चुकी— (रुक्मिणः समीपं गत्वा) जयति जयति कुमारः । महाराजस्वरं
 दत्तं द्रष्टुमिच्छति ।
 रुक्मी— एहि, गच्छामि । (इति सहसोत्थाय प्रचलितः ।)
 कञ्चुकी— (नृपसमीपं गत्वा) महाराज ! समायातः कुमारः ।
 रुक्मी— (प्रणम्योपविश्य) महाराज ! किमर्थमाहूतोऽस्मि ?
 राजा— वत्स ! तव भगिण्या दशवर्षवयो वृत्तम् । तस्याः पाणिग्रहणहेतु
 र्वीमामभ्यर्चयति । तत्र युवराजस्य काः परामर्शः ?
 रुक्मी— ममाऽभिमतमेव तत् ।

द्वितीय अङ्क

(तत्कर याव राजा ओ कञ्चुकी प्रवेश करै छथि ।)

- राजा— नयसागर ! कुमारके बजाउ ।
 कञ्चुकी— (रुक्मीक समीप जाय) कुमारक जय हो । महाराज अहाँके
 शीघ्र देखब चाहै छथि ।
 रुक्मी— आज, जाइत छी । (एकाएक ऊठि चलैत छथि ।)
 कञ्चुकी— (राजाक लग जाय) महाराज ! आवि गेलाह कुमार ।
 रुक्मी— (प्रणाम कय बैसि) महाराज ! कियेक बजाओल ?
 राजा— वाव ! अहाँक बहिनिक दस वर्ष वयस अय गेल । हुनक बियाहक
 हेतु महारानी हमरा कहैत छथि । ताहिमे युवराजक की
 विचार ?
 रुक्मी— हमर अभीष्टे अछि से ।

- राजा— कस्तम्याः समुचितो वरो विचारितः ?
 रुक्मी— चेदिराज-दमघोष-तनयः शिशुपालारूपो महाराजः ।
 राजा— तस्य कुल-शील-वित्त्यादिकं घटकमुक्तात् किं त्वया परीक्षितम् ?
 रुक्मी— मयैव सर्वं ज्ञायते ।
 राजा— तयारि लौकिककार्ये तेषां प्राधान्यादवश्यं ते प्रष्टव्याः ।
 रुक्मी— तर्हि समागच्छतु ।
 राजा— दीवारिक ! आहूयतां कलहवर्धनाऽभिधानो घटकः ।
 दीवारिकः—जं देओ आणवेदि । [मद्देव आशापयति ।] (इति निर्गत्य तेन
 सह आयातः ।)

(ततः प्रविशति कलहवर्धनः)

कलहवर्धनः— (गीत सं० - १२)

हम अति घटक नृपति सथे जान ।
 सब तह^१ अधिक हमर अभिमान ॥

- राजा— कनिका हुनका खेल उपमुक्त वर विचारल अछि ?
 रुक्मी— चेदि देशक राजा दमघोषक पुत्र शिशुपाल नामक महाराजके ।
 राजा— हुनक कुल शील वित्तय इत्यादि घटकक मुहें अहाँ जाँचल अछि की ?
 रुक्मी— हमही सब किछु जनेत छी ।
 राजा— तेयो लौकिक काजमे हुनका लोकनिक प्रधानता रहैत छनि, ते
 अवश्य हुनका सभके पुछियन्ह ।
 रुक्मी— त जावओ ।
 राजा—दीवारिक ! कलहवर्धन नामक घटकके बजावह ।
 दीवारिक - जे सरकारक आज्ञा । (बहार भय हुनक संग अवैत छथि ।)
 (तखन कलहवर्धन प्रवेश करैत छथि ।)

कलहवर्धन - गीतसं० - १३

सब तह^२ = सबसँ । परिनाम = फल । विग्रह = विरोध । साखा = बंशक

घटना करिअ हूअहि सवे ठाम ।
 काज एकओ न होअ परिनाम ॥
 जकरा कथा रहिअ हमे ठाढ़ ।
 तकरा हरि सओ^५ विरह बाढ़ ॥
 साखा मूल कुलिन अकुलीन ।
 सबक विवेचन हमर अधीन ॥
 नृप सिसुपाल अपन हित जोहि ।
 कुमर^६ निकट पठाओल मोहि ॥
 सुमति रमावति कौतुक पाव ।
 सिंह नरेश भूप बुझ भाव ॥

(नृपसमीप गत्वा) महाराज ! कदमाहुतोऽस्मि ?

राजा—घटकाक्षिप ! क्विमण्या विवाहार्थ विचारः करणीयः । तत्र के राजानः
 स्वजनाः सन्ति ?

कलह—संक्षेपेणैव श्रोतव्यम्—

शिशुपालः सुनीयश्च दन्तवक्रो विदुरथः* ।

शास्त्र^७श्चाथ जरासन्धो वेणुदारिनृपाथयः ॥१॥

राजा—यादवाश्च कथं नीत्ताः ?

कलह—ते तु बहुदोषमुष्ठाः ।

भेद । मूल = मूलग्राम । जोहि = ताकिहे । कुमर निकट = स्वमीक लग ॥

(राजाक समीप जाय) महाराज ! कोन काजो हम वजाओल गेल छी ?

राजा - घटकराज ! क्विमणीक विवाहक हेतु विचार करवाक अछि । ताहिमे
 के राजासभ अपनलोक छथि ?

कलह - संक्षेपहि मे सुनल जाय शिशुपाल, सुनीय, दन्तवक्र, विदुरथ, शास्त्र,
 जरासन्ध ओ वेणुदारि इत्यादि राजा स्वजन छथि ॥१॥

राजा - एहिमे यादव किथेक नहि कहल गेलाह ?

कलह - ओ लोकनि सँ बहुत दोष सभ सँ दूषित छथि ?

५ - मो । ६ - कुमरक - क, कुमर - ख । ७ - वत्तवत्तो विवरथः - ख ।

८ - शास्त्र - ख ।

राजा—कस्य कीदृशो विनयः ?

कलह—सर्वो विनीताः सन्ति । तेष्वपि दमघोषतनयस्य चेदिपते महाराज-
 शिशुपालस्याधिको विनयः ।

राजा—कथय ।

कलह—श्रूयतां तद् वाचिकम् :—

[गीतसं०—१३]

करसुग जोड़ि नमित भय, कहय निवेदन मोर ।
 भीषमदेव नृपति सजो, रकुमिनि हेतु निहोर ॥
 विगल बंस तुअ सवतह, कीरति के नहि जान ।
 घरमे करमे तोहे आगर, हमे तुअ दास समान ॥
 जइअओ तरास होअ मन, तइअओ कहिअ पुनु तोहि ।
 रकुमिनि जनम दिवस सजो, आसा बाढ़हि मोहि ॥
 से मोर पुरिअ भूपति, निज सरणागत जानि ।
 बड़ जन हृदय सदय धिक, ताहि न मने गुन हानि ॥
 परिजन कोव रहित हमे, सेता^८ लइए सहाय ।
 सतत रहैअ कुण्डिनपुर, किंकर अनुग कहाय ॥
 नृप सिसुपाल विनय गति, सुमति रमावति भान ।
 रस भुस मेथिल भूपति, सिंह नरेश सुजान ॥

राजा - पूर्वोक्त राजा सभ मे किनक केहुन विनय छनि ?

कलह - सभ विनीत छथि । ताहु मे दमघोषक पुत्र चेटिराज महाराज शिशु-
 पालक विनय अधिक अछि ।

राजा - कहह ।

कलह - हुनकहि शब्द मे सुनल जाय—

गीतसं० १३

करसुग = दुष्ट हाथ । नमित = नम्र । निहोर = नेहोरा, प्रार्थना ।
 कीरति = कीर्ति, यश । तरास = तास, डर । निज = निज,
 अपन । परिजन = परिवार । किंकर अनुग = अनुगामी सेवक ॥

८ - सेता - ख ।

(राजा १० तूष्णीं स्थितः)

रुक्मी—अहो ! विनयातिरेकः । अहो ! माधुर्यं वचन-संविधानस्य । महाराज !
अतएव मया उच्यते अक्षमेव वरो विधेयः इति ।

कलहः—यदाह युवराजस्तदेव कर्त्तव्यम् ।

राजा—द्वितीयमपि घटकमानीय विचार्यते । दीवारिक ! आहूयतां हरिवल्लभ-
शर्मा यादवानां घटकः ।

(दीवारिको गत्वा तेन सहायातः । ततः प्रविशति हरिवल्लभः)

हरिवल्लभः—

[गीत सं०—१४]

हमे हरिवल्लभ घटनाकार ।
यादव कुल भिन्न हमार विचार ॥
घटनक कथा करिअ हमे थोड़ ।
अलपट्टि काल कराविअ जोड़ ॥
रुकुमर हमार ११ जे घर पाह ।
रुकुमिणि सज्जो महि तनिक १२ विवाह ॥
हरिपद प्रनत रमापति भान ।
रस बुझ सिह नरेन्द्र सज्जान १३ ॥

(राजा चुप रहैत छथि ।)

रुक्मी—अहो ! अतिशय विनय, दाह ! वचन-रचनाक मयुरता ! महाराज !
ते हम रहैत छी—हिनके घर बनाव ।

कलहः—जे युवराज कहैत छथि सएह कयल जाय ।

राजा—दोसरो घटककेँ जानि विचारैत छी । दीवारिक ! बजावह हरिवल्लभ
शर्मा नासक यादवक घटककेँ ।

(दीवारिक जाय, तनिक संग अवैत छथि । तखन हरिवल्लभ प्रवेश
करैत छथि ।)

हरिवल्लभ—

[गीत सं०—१४]

घटनाकार—विवाह ठीक करयबला, घटक । अलन = थोड़हि ॥

(राजाक समीप जाय शुभाशिस देत छथि ।)

१० - ००० - 'ख' । ११ - कुनर - छा १६ - तनिक - छ । १२ - समान क ।

(नृपसमीपं गत्वा शुभाशी वंदति ।)

राजा - (प्रणम्य विनयातिरेकं करोति ।)

कलहः—(साम्यसूर्य जनान्तिकम्) कुमार ! भयि कोऽपि नाऽऽदरः कृतः ।
अस्मिन् घटकापसरे वधमाधरातिशयः ?

रुक्मी—आदरादेव भाविनं कार्शमनुमापयति प्राज्ञः, तेन कृष्णपक्षपातीय तात-
स्य हृदयमवगच्छामि । भाषणादेवाभिन्वक्ति भविष्यति ।

हरिवल्लभः—महाराज ! किमर्थमाहूतोऽस्मि ?

राजा—रुक्मिण्यर्थं को वा महीपः पक्षपाताहः ?

हरिवल्लभ—(जनान्तिकम्)

उत्पत्ति - स्थिति - संहारहेतु गच्छवाहनः ।

उचितरतव जामाता श्रीकृष्णो जगदीश्वरः ॥१॥

राजा - भद्रम् । समाभिप्रेतेभेव भवद् वचनं, किन्तु दुर्विनीतो मम कुमारस्त-
त्प्रातिपक्षम् आचरति ।

(राजा प्रणाम कय अतिशय विनय करैत छथि ।)

कलहः—(ईर्ष्या सहित कनफुसकी) कुमार ! हमरा विषय से कोनो आदर
महि कयलनि । एहि नीच घटकक बैरि से कियेक अतिशय आदर
करैत छथि ?

रुक्मी - आदरहि सँ भावी कार्यक अनुमान लगवैत छथि विद्वान्, ताहिसे
बुझि पड़ैछ जे पिताक हृदय कृष्णक पक्षपाती छनि । गप्पे सँ स्पष्ट
होयत ।

हरिवल्लभ - महाराज ! कोन काजक हेतु हम बजाओल गेल छी ?

राजा - रुक्मिणीक लेल केँ राजा स्वीकार करबाक योग्य छथि ?

हरिवल्लभ - (कनफुसकी कय) संसारक उत्पत्ति स्थिति ओ नाशक कारण
गुरुइवाहन (गुरुइक सवारीबला) जगदीश्वर श्रीकृष्ण अहाँक
जमायक योग्य छथि ॥१॥

राजा - बड़ बाढ़ियाँ ! हमर सम्मते अहाँक वचन अछि, किन्तु अशिष्ट हमर
कुमार तकर विरुद्ध आचरण करैत छथि ।

हरिवल्लभः - (कुमारसमीपं गत्वा) जयति जयति कुमारः ।

रुक्मी - भवद्भ्यां रहसि विचार्यताम् ।

(उभौ तथा कुतः । तत्र -)

हरिवल्लभः - (जनान्तिकम्) को वा वरो विचारितः ?

कलहः - दमघोषतमसः । भवता को वा विचारितः ?

हरिवः - वासदेवः ।

कलहः - (सकोपं) जरामां बहवो दोषा इति सम्प्रयुक्तमभियुक्तः । यतः,

सर्वे ते यदुवंशजा नृपपदभूषाश्च । तथाऽप्यसौ

गोपालः परिपोषितोऽयं बहुदिनं गोवत्ससंरक्षकः ।

गोपस्त्रीरमणोत्सुको दूषमहा स्त्रीधातको बन्धुहा॥१४

कृष्णो भूपसुता-करग्रहविधौ कस्मात् स्वया सम्मतः ॥१५॥

हरिवल्लभः - शृणु रे मूर्ख ! स्वया न परिचीयते देवदेव ।

हरिवल्लभः - (कुमारक लज जाय) कुमारक जय हो ।

रुक्मी - अहाँ दुनु घटक एकान्त मे विचार ।

(दुनु तहिना करै छथि ।)

हरिवल्लभः - (कनकसुखी कय) कोन वरके अहाँ सोचने छी ?

कलहः - दमघोषक पुत्र । आ अहाँ कितक विचार कइने छी ।

हरिवल्लभः - वासुदेव ।

कलहः - (कोपपूर्णक) बुढ़ारी मे बड़ बड़ दोष होइत छैक से मान्यलोकनिक कहल छीके छनि । कियेक त :-

ओ सभ यदुवंशी, राजाक पदसी च्युत अछि, ताहू मे ओ गोआर

सभ सँ बहुत दिन धरि पासल गेल, माय बच्छाक चरबाह, गोआरक

स्त्रीक संग रमण करवामे उरसूक, बड़बक हस्तारा, स्त्री (पूतना)क

घातक, बन्धु (कंस)क हत्या कयनिहार कृष्ण एहि राजाक पुत्रीक

विवाह मे अहाँक द्वारा कोना उपयुक्त बुझल गेल ? ॥१॥

हरिवल्लभः - सुन रे मूर्ख ! तो कृष्ण के नहि विन्दैत छहुह, :-

१४ - परितोषित - क.ख । १५ - अवृत्ता - ख ।

भूपालास्तव सम्मता नरपती ! दैत्यदेहाः क्षिती

सम्भूताः विशुपाल-शात्व१६-मगधाधोशादयः सन्ति ये ।

तेषामेव विनिग्रहाय जगतामादि रीदो अल्लभः

श्रीकृष्णो रमतेऽधुना मधुरिपु१० लंघ्यावतारो भुवि ॥१०॥

अथ च,

गोपास्ते दिव्यदेहाः सुकुतबहुयुतो नन्दगोपः प्रजेशो

गोप्यस्तादृशाऽऽसरोऽशा वृजभुवि जनिता देवराजानुभवा ।

कंसोऽरिष्टदृष्ट दैत्यः कपटघृतसनुः पूतना बालहन्त्री

यस्मिन् दोषास्तवयोक्तास्त्रिभुवन-महितेऽन्धमघवे ते गुणाः स्युः ॥११॥

कलहः - धिक् ब्रह्मापमद ! सत्वरं प्रयाहि यावद् युधरजेन न१९ श्रुतमस्ति ।

हरिः - अरे बालिभारं - ! नूतनघटक ! कुमारसमीपेऽपि वक्तव्यमेवेतत् ।

ऐ मनुष्यमे पशुस्वरूप ! तोहू सम्मत राजासभ पृथ्वी

पर दैत्य देह धारणकय उत्पन्न भेल विशुपाल, शात्व, मगधराज

(जरासन्ध) आदि जे केओ अछि तकरहि सभक मारबाक हेतु संसारक

आदिस्वरूप यदुवंशीक प्रिय मधुसूदन श्रीकृष्ण एखन पृथ्वी पर अव-

तार लय रमण करैत छथि ॥१०॥

आओरो -

ओ गोपलोकनि अलौकिक देहधारी धिकनि, बहुतो पुण्य सँ युक्त नन्द

गोप प्रजापति (ब्रह्मा) धिकाह, ओ गोपीसभ अप्सराक अंश धिकीह जे

देवराज इन्द्रक आज्ञा सँ व्रजभूमि पर जन्म लेने छथि । कंस दैत्य

अशुभ कर्म तथा छल सँ शरीरधारिणी पूतना बालकक हत्यारिनि

छल । जाहि त्रिभुवन-पूजित माधव मे तो जे दोष कहलह अछि से

सभ गुण धिकनि ॥११॥

कलहः - धिक् नीच बूढ़ ! भट दय भागह यावत् युधराज ई बात नहि सुन-
लबूझ अछि ।

हरिवल्लभ - अरे तादान ! तबसियूआ घटक ! कुमारक जय ई वज्रै करब ।

११-शात्व. ख । १०-मुररिपु. ख । १२-सहिते - ख । १३ - X-ख ।

१० - बालनूतन - क ।

(इति कलहायमानो कुमारनिकटमागत्य स्वं स्वं आच्यमर्थमावेदितवन्ती । तत्र प्रथमं कलहवर्धनः--)

कलह० -

[गीतसं०--१५]

कुमर सुनिध^{२१} हमर विचार ।
जे वर कयने अछि उपकार ॥
नृप^{२२} दमघोष - तनय शिशुपाल ।
जसु पद प्रणत बहुत भूपाल ॥
कुल विक्रमे तूअ धिकधि समान ।
तसु सम विनय कथा के जान ॥
मौम सुनीध जरासन्ध^{२३} राज ।
सभकी अभिमत अछि ई काज ॥
घटना रोति रमावलि गाय ।
सिंह नरेश भूप बुझ भाष ॥

रक्षमी भवता सभ सम्पत्तिप्राप्तम् । (हरिवल्लभ प्रति)भवानपि कथयतु ।

हरिव० -

[गीतसं०--१६]

हमर विचार सुनिअ यदुराज ।
विभूवन - नायक धिक यदुराज ॥

(एवं अगड़ा करैत वृद्ध घटक कुमारक लग आवि अपन कथ्य अर्थ आवेदित कयलनि । ताहिमे पहिने कलहवर्धन कहैत छथि ।)

कलह० -

गीतसं० - १५

नृप = राजा । दमघोष तनय = दमघोषक पुत्र । जसु पद = जनिक पद पर । विक्रम = पराक्रम सौ । अभिमत = अभीष्ट, मनक अनुकूल ॥

रक्षमी - अहाँ सब निछु उचित कहल अछि । (हरिवल्लभ प्रति) अहूँ कह ।

हरिवल्लभ -

गीतसं० - १६

विभूवन नायक = सीनू लोकक नेता । यदुराज = श्रीकृष्ण ।

२१ - सुनिधि - क । २२ - नृपति घोष - क । २३ - जरासन्ध - का

हरपित भइए करिअ वर जाहि ।
शम्भु विरजिच प्रणत रह जाहि ॥
तसु गुन कथन करत के आज ।
कहय न पावधि पद्मराज ॥
नृप शिशुपाल असुर अवतार ।
ताहि करय वर कोन विचार ॥
हरिपद प्रणत रमावलि भान ।
रस बुझ सिंह नरेश सुजान ॥

रक्षमी - (हरिवल्लभ प्रति सकोपम्) गच्छतु भवान् मत्सकाशात् ।

हरिव० - (सत्रासं नृपसमीपमागत्य) महाराज ! कि वक्तव्य मया वासुदेव प्रति ।

राजा - देव्या मया च मनसा परिकल्पितोऽशौ
पाणिग्रहे मदुपति दुःशितः पति मे ।
मुदा, अथाऽशुभमतिः शिशुरेव भूय
प्रत्युद्गमाचरति, कि करणीयमत्र ॥१२॥

तथापि सम्प्रति स्वर्गयरोद्योग एव श्रेयस्करः । तस्मिन्नेव यथा भगवान् आपमन-प्रसादमाचरति तथा विधेयं भावयन्मिः ।

विरजिच = ब्रह्मा । पद्मराज = सर्वराज शेषनाग । असुर = दैत्य ।

रक्षमी - (हरिवल्लभक प्रति कोपपूर्वक) जाउ अहाँ हमरा लग सौ ।

हरिवल्लभ - (जरावल राजाक लग आवि) महाराज ! की कहयनि हम श्रीकृष्ण के ?

राजा - महारानी जो हम मन । हुनके निश्चय कयने छी जे एहि विवाह मे हमर पुत्री पति श्रीकृष्ण होयि । मुदा, दुर्मति ई हमर कुमार बारंबार बाधा उपस्थित करैत छथि । एहना स्थिति मे एतय की करवाक चाही ? ॥१२॥

तयो स्वर्गवरक उद्योग करबे नीक होयत । ताहि मे जाहिँ भगवान् श्रीकृष्ण अयवाक कृपा करथि से अपने लोकनि कयल जाय ।

हरिवं—एष भविष्यति । (इति निष्क्रान्तः) ।

स्वमी—(नृपसमीपमागत्य सकोधं गीतेन वाच्यमावेदयति ।)

अथ गीतम् सं०—१७

हमर विचार सुनिज महाराज ।
एहन विचार देल कोन काज ॥
तेजि सकल समकक्ष भूपाल ।
श्वनहुं सुनिज किजो गोपाल ॥
गोप सबहुं परिपालल जाहि ।
नृपति सुता पति के कह ताहि ॥
गोपवधु सज्जे सतत बिहाइ ।
मातुल वध नहि जाहि विचार ॥
तिरिधध गोवध जाहि न भीति ।
ताहि करब वर ई कोन रीति ॥
कमर कथन रमापति भान ।
रस बुझु सिंह नरेन्द्र सुजान ॥

राजा—अस्म्येतत् किन्तु श्रुतं मया सज्जनेभ्यः, (गोपास्ते दिव्यदेहा इति पद्यं
[श्लोक सं० ११] पठति) । यदि एतयोः तस्य

हरिवंशम्—एहिना होयत । (बहार होइत छथि) ।

स्वमी—(राजाक समीप आवि कोधपूर्वक गीतक द्वारा अपन आशय कहैत
छथिन)

गीत सं०—१७

तेजि = छाड़ि । समकक्ष = तुल्यश्वनहुं = कानहुं सँ । गोपाल = कृष्ण ।
नृपति सुता पति = राजपुत्रीक स्वामी । बिहाइ = रमण करैत अछि ।
मातुलवध = मामक हत्या । तिरिधध = स्त्रीवध (पूतनाक हत्या) ।
राजा—ई बात अछि, मुदा हम सुनल अछि सज्जतलोकनिक मुहँ (‘गोपास्ते
दिव्यदेहा’ श्लोक सं० ११ पढ़ैत छथि) । यदि हिनका (स्वमणिक)

२४—सुनिज कीट—छ । २५—परिपालन—क छ ।

२६—पति तथा तस्योर्विवाहो—क; यजनेन तस्योर्विवाहो—छ ।

विवाहो न भविष्यति तदा यादवीयं संयमानीय बलात् तव भगिनीं
परिहर्यापि कृष्णः परिणोष्यतीत्यपि श्रूयते ।

स्वमी—किंवदन्ती-वाक्यमात्रमेतत् । चेत् सत्यमेतत् पीरुषमाकलयत तातः
(धनु वीणमवलोक्य दस्तोरधरं सन्देह्य च) :—

[गीतसं०—१८]

जखने धरब हम बान सरासन, होयत गुण टंकार ।
सम्मुख हमर रहत के सादब, सरे पूरब संसार ॥
कह राजकुमार, हमे न करबे वर नन्द-कुमार । ध्रु० ॥
पाँच सहोदर सकल अस्व लय, करब समर आरम्भ ।
से देखि रिपुगण वास-जुगुत गन, तेजत भूजबल दम्भ ॥
दन्तवदन, शिशुपाल, बिदूरथ, बहुविधि करत उपाय ।
सोम, सुनीध, जरासन्ध नरपति, ई सब हमर सहाय ॥
नृप-सिंहारान जे नहि पावय, चामर छत्र बिहीन ।
गोपतनय वर, भूपति के कर, जे कुल होअ मलीन ॥
कूमर जे किछु कहल जनक सो, सुमति रमापति नाव ।
सिंह नरेन्द्र बिदेह-महीपति, रसबिन्दक बुझ भाव ॥

संग हुनक विवाह नहि होइत छनि त यादव सेना आनि बलजोरी अहाँक
बहिनिक हरणो कय कृष्ण विवाह कय लेताह से सुनल जाइछ ।

स्वमी—ई जनश्रुतिक बाक्ये (अफवाह) थिक । जँ ई सत्य हो तँ अपन बालक
अन्दाज लगाउ गिताजी । (धनुष-बाण देखि दाँत सँ ठोरकेँ पिचैत) ॥

गीतसं०—१८

सरासन = धनुष । गुण-टंकार = धनुषक डोरीक कड़-कड़ा-
हटि । सरे = बाण सँ । नन्द-कुमार = कृष्ण । समर = युद्ध । रिपुगण
शत्रुसभा वास जुगुत = भययुक्त । दम्भ = अहंकार । दन्तवदन = दन्त-
वन्ध आदि राजासभ । नृपविहारान = राजाक सिंहासन । गोपतनय
गोआरक पुत्र । कूमर = बच्चा । रसबिन्दक = रसक प्राप्त कयनिहार ।

२७—परिणयिष्यती—क छ । २८—कुमार—छ ।

राजा—(“भूपालास्तव सम्मता” इति पद्ये [श्लोक सं० १२, पठति] अतएव २९ मयोच्यते जगदीश्वरेण सह कथं विग्रहो विधेय इति। किन्तु युवराजानुमत्यैव हविमण्याः पाणिग्रहणमाचरन्तु देवदेवा।
रुक्मी—(सूक्तोद्यं) कन्याप्रदाने जनकस्येच्छा प्रधानेति यथा रोचते ताताय तथा-
उचरणीयम् । मया तु भवद् राजधान्यां न स्वेपमे । (इति धनुर्वाण-
माशय प्रचलितः) ।

तत्र गीतम् [सं० १६]

जनक वचनं सुनि शोषितं भयं मनः, घटकराजं लयं साथ ।
काङ्क्षि^{३०} विभूषनं सकलं मनीहरं, चापं बाणं गृहिं हाथ ॥
इति चलल कुमारः, हम नहि सतये एहन विचार ॥ ध्रु० ॥
जदुपति दोष सकल, हम भावल, ताते न राखल कान ।
हरिहि करधु वर, हमे छाड़व घर, जायव जनपद आन ॥

राजा—(“भूपालास्तव” श्लोक सं० १२ एहि पद्यके गृहीत छथि ।) अतएव हम कहैत छी जे संसारक ईश्वर श्रीकृष्णक संग सगड़ा कयनहि कोना उचित होयत । किन्तु युवराजक विचारे^{३१} हविमणीक हाथ वरय देवदेव श्रीकृष्ण ।

रुक्मी—(क्रोधपूर्वक) कन्यादान मे पिताक इच्छा प्रधान होइत छैक से जे नीक लागय से कह । हम त अहाँक राजधानियहु मे नहि रहय । (धनुष बाण लय चलि दैत छथि ।)

गीतसं०—१६

जनक वचन = पिताक बात । कोषित = कुट । काङ्क्षि = उछारि । चाप = धनुष । जदुपतिदोष = कृष्णक दुर्गुण । भावल = बहल । ताते = पिता । हरिहि = कृष्णहि के । जनपद आन = आन देश । जेदिराज = जेदि देशक राजा दमघोषक पुत्र । तस्मिह तजि = तनिका छोड़ि । गोप जनय = गोआरक बेटा श्रीकृष्ण । जनक अवधान = पिताक ज्ञान । कोषक परिनति = क्रोधक परिणाम ॥

२६ - X - ई पंक्ति 'ख' मे नहि अछि । ३० - कोटि - क ।

जेदिराज दमघोषक नन्दन, जे थिक हमर समान ।
तस्मिह तजि गोपजनय वर भावधि, बुझल जनक अवधान ॥
कुमर दुखभेति, कोषक परिनति, सुमसि रमापति आन ।
सिंह नरेन्द्र सकल गुन आगर, बुझ नृप पश्य सुजान ॥

राजा—(उत्थाय सानुनयं प्रतिनिवर्त्य) वरस ! युवराजानुमत्यैव मया सर्वं कार्यं विधेयं, किन्तु त्वद्व्यभिमतमवगन्तुं तथोक्तम् । अन्यच्च, क्षत्रिय-
याणां कुमारिका-परिणये स्वयंवरोऽपि पुरस्कृत एव मन्त्र^{३२} स्तेव वि-
धातुः कुमारिकायाश्चेच्छा । एवं कृते कलहाशङ्का तु^{३३} निवृत्तैव
भविष्यति ।

रुक्मी—^{३४} महाराज ! सम्मतेतु । तस्मिह राजन्योपनिमन्त्रणाय क्रियता-
मुद्योगः ॥

राजा—^{३५} दादवाना निमन्त्रणे को विमर्शः ?

रुक्मी—तेऽपि निमन्त्रणीयाः ।

राजा—(ऊठि साम्बना दैत घुराय) वाउ । युवराजक अनुमतिअहिस हम सब काज करव मुदा अहाँक कभिप्राय बुझबाक हेतु ताहिछपे कहल । दोसरो बात, क्षत्रियसभके कुमारीक विवाहमे स्वयंवरो तँ प्रसिद्धे मन्त्र अछि ताहिमे विधाताक ओ कुमारीक इच्छा काज करैछ । एना कयला पर सगड़ाक आशंका तँ समाप्ते भय जायत ।

रुक्मी - महाराज ! ई उचित थिक । तखन राजालोकनिक वजयबाक उद्योग कयल जाय ।

राजा - सादवलीकभिके निमन्त्रण देवामे अहाँक की विचार ?

रुक्मी - धनुकोसभके निमन्त्रण देल जाय ।

३१ - भूतया 'ख' । ३२ - ते - 'ख', '०' - 'क' । ३३ - ० - क ।

३४ - ० - क ।

राजा - कः कोऽयं भोः ?

दीवारिका - (प्रविश्य) एसोहिआ ओणसेतु देओ । [एसोऽस्मि, आज्ञापययु देवः ।]

राजा - आहूयतां शटिति गमनक्षमो ब्राह्मणो नापितश्च ।

(दीवारिकस्तथा करोति । ततः प्रविशति ब्राह्मणः)

गीतसं ०--२०

के नहि जानय हमे द्विजराज । सतत करिअ हम भूपति-काज ॥
धवल तिलक, उपवीत विसाल । धौत वसन-युग कर जपमाल^{३५} ॥
ब्रह्मतेजे भूजबले समजूत । आनिअ गमन उपाय बहूत ॥
अधिके दिवसे पाविअ जे देस । ततम तोरित जाइअ अकलेस ॥
सुमति रमापति कौतुक गाव । संधिल नृप रसमय बुझ भाव ॥

द्विजः—महाराज ! शुभानि सन्तु । किमर्थमाहूतोऽस्मि ?

राजा—(प्रणम्य) द्विजराज ! हविमण्याः स्वयंवराय राजानो निमन्त्रणीयाः ।
तत्र स्वया मथुरापुरी गत्वा देवदेवः श्रीकृष्णो यादवीः सह निमन्त्र-

राजा—कसो अछि ?

दीवारिक—(प्रवेश कय) इयेह छी, आज्ञा देल जाय सरकार ।

राजा - बजाउ लटव जयबामे पटु ब्राह्मणलोकनिके ओ नीआसबके ।

(दीवारिक तहिन करैछ । तखन ब्राह्मण प्रवेश करैछ छवि ।)

गीतसं ० - २०

हमे द्विजराज - हम ब्राह्मणमे धोष्ठ छी से । धवल = उज्जर । उप-
वीत = जनक । धौत वसन युग = धोअल एक जोड़ वस्त्र । कर = हावमे ।
समजूत = संयुक्त । गमन = जयवाक । तोरित = शीघ्र । अकलेस = सुग-
मता से ॥

द्विज—महाराज ! शुभ हो । कोन प्रयोजन से बजाओल अछि ?

राजा—(प्रणाम कय) द्विजराज ! हविमणीक स्वयंवरक हेतु राजालोकनि
के निमन्त्रण देवाक अछि । ताहि मे अहाँ मथुरापुरी जाय देवदेव

णीयः । प्रेषणीयाश्चान्ये^{३६} सरस्वती विद्या नातादेशस्थ-नृपनिम-
न्त्रणाय ।

द्विजः—सर्वथाऽऽचरणीयं मया स्वकार्यमिदम् । किन्तु प्रत्येकं तत्तज्जन-
पदानां नामाणि वक्तव्यं देयेन ।

राजा—(गीतेनाऽऽदिशति—)

[गीतसं ०--२१]

हे द्विज ! करिअ हमर उपकार ।

ई सवे जनपद तोरित गमन करि^{३७} न्योतिअ भूप-कुमार ॥
अङ्ग बङ्ग गुजरात ओड़सा, बस्तर कच्छ कलिङ्ग ।
द्राविड मरहट केरल सोरठ, कारनाट तैलङ्ग ॥
देश रत्नपुर आओर नागपुर, मालव कटक असाम ।
देशगढ़ गाला नगरी बाङ्गा^{३८}, राजमहल सुखबाम ॥
मगह मलापुर अओर भोजपुर देश सरैसा^{३९} बसार ।
बलिवाबासी नगरी कासी, जे थिक विभुवन सार ।
अन्तरवेम प्रयाग मनोहर, मथुरा सुतक निषाध ।
अओर कतओज नगर कुर्माचल ओएल के नहि जान ॥
नगरकोट श्रीनगर उज्जैन, मोरंग श्रीन नेपाल ।
माछवार हस्तिनपुर जयपुर पाटलिपुत्र सुविशाल त

श्रीकृष्णके यादव सहित निमन्त्रण देव । आ जान श्रीछगामी ब्राह्मण-
लोकनिके नाना देशक राजाक ओहिठाम निमन्त्रण देवाक हेतु पठाछ ।

द्विज—हम समत रहे राजाक एहि काजके सम्पादित करब । किन्तु, ताहि
ताहि प्रत्येक देशक नामो बाजल जाओ महाराज ।

राजा—(गीत से आदेश दैत छवि)

गीतसं ० - २१

द्विज = ब्राह्मण । जनपद = देश । तोरित = शीघ्र । अङ्ग = भागल-

मध्यभूमि मिथिला अतिसुन्दर, जनक-महीपति-वेश ।
आगम निगम पुरान विवेचन, द्विजगन कर अकलेश ॥
ऐहो कहल नहि से सभ नेजोतय, निजजन कर अवधान ।
कुमनि कुमर स्वयंवर कारने, सुमति रमापति भाग ॥

द्विज—महाराज^{४०} ! परन्तु, सर्वत्र कि वक्तव्यमिति तत्र तत्राऽस्मामि ?

राजा—(पत्र वाचयति)—

भूपो भूपो भीष्मकः कुण्डिनेशो
नत्वा नत्वा वेदवत्येष भूपान् ।
शस्त्रे शास्त्रे दानकार्ये च दक्षान्
अद्भुतव्यं मद्वचोऽनुग्रहेण ॥१३॥

स्वयंवरों मे दुहितुः शुभे दिने
वैशाख - शुक्ले भवितेति मत्वा ।

सम्पाद्यतामैव^{४१} भवद्भिरथ स^{४२}

दयालुमिह^{४३} किल सप्तमी बुधे ॥१४॥

द्विज—एष याव्यमि । (इति प्रचलितः ।)

पुरा । अधोध = अधध । आगम निगम पुरान = तन्त्र वेद ओ पुराण । अकलेश = अनायास । अवधान = ऊहि ॥

द्विज—महाराज ! परन्तु, सभ ठाम हमरा लोकनि की बाजब से कहल जाय ।

राजा—(पत्र वचैत छथि)—

कुण्डिनपुरक राजा भीष्मक बारंबार प्रणाम कय सकल शास्त्र
मे ओ दान मे पट राजालोकनि के सूचित करैत छथि जे हमर वचन
पर हुवा कय अद्भुत करी ॥१३॥

हमर पुत्रीक स्वयंवर शुभ दिन वैशाख शुक्ल सप्तमी बुध के
होयत से बूझि दयालु अपनेलोकनि ताहिमे आबि एकरा सम्पन्न
कराबौ ॥१४॥

द्विज—इयेह जायव । (खिदा भेलाह ।)

४०—महाशय—ख । ४१—सम्पाद्य तावह—ख । ४२— \times —स ख । ४३—
दयालुमिह—क ।

राजा—अहमप्यन्तःपुरं गत्वा स्वयंवरोद्योगं देवी निवेदयामि ।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

॥ इति रविमणीपरिणये स्वयंवरोद्योगो नाम द्वितीयोऽङ्कः ॥

अथ तृतीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णः)

[गीत सं०—२२]

हेरदत हर भवभीति कलेश । अतिसुखदायक हरि - परवेश ॥
कनक - रत्नमय मुकुट विराज । मकराकृति कुण्डल श्रुति छाज ॥
हृद्गनील - मणि सम शत्रु कोति । मलयज अनुलेपन बहु भाति ॥
वदन^{४४} विनिन्दित सारव चन्द । लोचन युगले अरुन अरविन्द ॥
रोचन तिलक ललाट विसाल । पीत वसन - युग खेर वनमाल ॥

राजा—हमहूँ अन्तःपुर जाय स्वयंवरक उद्योग देवीके बुझबैत छियनि ।

(सभ ब्रह्मर भेल)

रविमणीपरिणय मे स्वयंवरोद्योग नामक द्वितीयअंक समाप्त ॥

तृतीय अंक

(सखन श्रीकृष्ण प्रवेश करैत छथि ।)

हेरदत हर = देखितहि हरण करैत छथि । भवभीति कलेश = संसारक भय
ओ व्यथा । कनक = सोना ओ रत्नजडित । मकराकृति = मोहिक (मोछक)
आकृतिवला । श्रुति = कानमे । शत्रु कोति = देहक कांति । मलयज अनुलेपन
= धीखण्ड चानन । सारव = सरदक । अरुन = लाल । वसन-युग = एक जोड़
पद । ३२ = छाती पर । वनमाल = गरा से ठेहन धरिक मा । अङ्गद =

१—वदन—क ।

अङ्गद बलय, रसन मञ्जीर । विविध विभूषण सोभ सरीर ॥
विमल नखत सम मोतिम हार । जनि बहु गगन गङ्गा दुइ धार ॥
कञ्चन करब तसु रूप बखान । हरिपद प्रनत रमावति भान ॥

श्रीकृष्णः—(सभागृहमागत्य विलोक्य च) कः कोऽयं भोः ।

दीवारिकः—(प्रविश्य, शिरसा प्रणम्य) एगोहि आणवेदु देवदेवो ।
[एषोऽस्मि, आज्ञापयसु देवदेवः ।]

श्रीकृष्णः—सभार्थं शय्या आस्तरणीया, रक्षणीयानि च हिरण्यमाग्रासनानि ।
दीवारिकः—मए पदुमं जेव सव्वं उवणीदं । सम्पदं उण भदं वित्थरीअदि ।
[मया प्रथममेव सर्वमुपनीतम् । साम्प्रतं पुनः भद्रं विस्तार्यते ।]

श्रीकृष्णः—सम्यक् कथम् । अतः परम् आर्यस्य पन्थानमवलोक्य^१ । कथं
विचारित्तुमायेण ?

दीवारिकः—किञ्चिद दूरं गत्वा विनियत्वं^२ सानन्दं^३ एसो आबच्छरि बल-
देवो । [एष आगच्छति बलदेवः ।]

गौहिक गहना । बलय = मट्टा । रसन = डेरकस । मञ्जीर = तूपुर । नखत =
तरेगन । गगन = आकाश मे (मोतीक मालाक स्वच्छता दु गङ्गा धारक
उपमा मे) ।

श्रीकृष्ण—(सभाभावन आबि भो देवि) कयो अछि ?

दीवारिक—(प्रवेश कय मोथ सौ प्रणाम कय) इयेह छी, भागवान् आज्ञा देथु ।

श्रीकृष्ण—सभाक हेतु ओछान बिछावह, आ सोनाक आसन सेहो रखिहह ।

दीवारिक—हम त^४ पहिनिहि सबकिछु तैयार रखने छी । आब नीक जका
बिछाव दैत छियंक ।

श्रीकृष्ण—नीक कयलह । एकर बाद आर्य बलदेवक बाट देखह । आर्य की
विचारलनि ?

दीवारिक—(किछु दूर जाय धुकि आनन्दपूर्वक) इयेह बलदेव अबैत छथि ।

१—कीने—ख । २—लोकये - क; लोचय - ख ।

श्रीकृष्णः—दूरे समीपे वा ?

दीवारिक—दुभार-समीपं उवगदी । [द्वारसमीपमुपगतः ।]

श्रीकृष्णः—(सहर्षं ससम्भ्रमं चोत्थाय) तहि द्वाराद् बहिरेव गत्वा तमवलोक्य^५
यामि । (इति तथा करोति ।)

(ततः प्रविशति बद्धमान-स्वरूपो बलदेवः)

[गीत सं० - २३]

रिपु - बल - तिमिर विनाश दिनेस ।

रोहिणि - नन्दन देल परवेस ॥

गौर वरन शत्रु अति अभिराम ।

देखइते भुवन मनोहर राम ॥

नव नीरव सम नील दूकूल ।

विमल कनक - भूषण बहुमूल ॥

वाक्छणि - मदे घूम लोचन लाल ।

एक सवण - कुण्डल सुविशाल ॥

रस^६ लस जोठ नहि, काप सरीर ।

होला रस सालस यदुवीर ॥

श्रीकृष्ण—दूर मे कि लगहि ?

दीवारिक—द्वारक समीप आबि गेलाह ।

श्रीकृष्ण—(सहर्षं हरवरायल ऊठि) तखन द्वारसँ बहारे जाय देखैत छियनि ।
(तहिना करैत छथि ।)

(आगू वर्णनीयरूप मे बलदेव प्रवेश करैत छथि ।)

गीत सं० - २३

रिपुबल = शत्रुक सेनाखपी अन्धकारक नाशक सूर्य । रोहिणिनन्दन
= रोहिणीक पुत्र बलदेव । अभिराम = सुन्दर । भुवन मनोहर = संसार मे
सुन्दर । राम = बलराम । नीरव = मेघ । दूकूल = वस्त्र । बहुमूल = बहुमूल्य ।

५ - देखइते भूष - क । ६ - रसन सजोठ - क ख ।

हृलधर रूप रमापति भान ।

सिंह नरेन्द्र सकल रस जान ॥

श्रीकृष्ण—(समाहित^१ प्रणम्य च करे गृहीत्वा समुपवेश्य स्वयमपि समुपवि-
श्य) दीवारिक ! विज्ञाप्यतां मादवैः सार्धं महाराज उपसेन, समा-
यात आर्य इति ।

(स च तथा कृतवान् । ततः प्रविशति मादवैः सार्धं राजा
उपसेनः । तत्र गीतम्—)

[गीत सं-२४]

हरिपद कमल मधुप मधुरेश ।

उपसेन भूपति परवेश ॥

कनक किरीटे मनोहर माध ।

अहोदय यादवगण सखे साथ ॥

पृथु, कृतधर्म, विपुल, अक्षर ।

चक्रदेव, सत्यक अतिशूर ॥

चित्रक, सारन, वीर सुदेव ।

भृङ्गकार^२, राजा अधिदेव ॥

बाहण मदे^३ = मदिशक उन्माद हो । एक = अद्वितीय, अनुपम । सबत = कान-
से । रस लस जोड़ तह्नि = ठीक सुखावल छनि ।

हृलधर = मधिरा । सालस = अलसायल । यदुवीर = बलराम ॥

श्रीकृष्ण—(आलिङ्गन औ प्रणाम कय हाथ धम बेसाय अपनहुँ बेसि) दीवा-
रिक ! सभ यादव औ महाराज उपसेनके सूचित करहुँ जे आर्य
(बलदेव) आधि गेलहुँ ।

(दीवारिक तहिना करैल । तखन यादवसभक संग राजा
उपसेन प्रवेश करैत छथि ।) ताहिठाम गीत—२४

हरिपद-कमल-मधुप = श्रीकृष्णक चरणकमलक भीरा । मधुरेश = मधु-
राज राजा । कनक किरीटे = सोना औ रत्न सौ । अरिसेन = शत्रु क सेना ।

१ - साहित्य - ख । ७ - X X X - क । ८ - हरिक संग भवते मधुरेश -
क । ९ - जोरिश - क । १० - तहु कारण राजा - क ।

मद, सातकि, शतदुमन, प्रसेन ।

जमु भूजवले कम्पित अरिसेन ॥

मृदर, सुफलक, विदूरथ, कङ्क ।

नृप बृहदुर्ग समर निस्संक ॥

निपुण गवेष्टन सतधनु वीर ।

निवृत्त शत्रु, आह्व अतिश्रीध ॥

यादव सकल कह्य के जान ।

हरिपद प्रनत रमापति भान ॥

बलदेव-श्रीकृष्ण—(उत्थाय) इह नृपसिंहासनमुपविश्य अलङ्करोतु महाराज
उपसेनः ।

उपसेन—बदाऽऽकाशगतो देवदेवी । (इत्युपविशति) ।

श्रीकृष्ण—(बलदेवं प्रति) आर्य ! स्वागतं ते ।

बलदेव—एवमेतत् ।

श्रीकृष्ण—तात ! नन्ददायः सुखेन सन्ति ?

बलदेव—भवदीय गुणान् कीर्तयन्तो वृजमुवि सर्वे सुखेनैव निवसन्ति ।

(ततः प्रविश्य दीवारिकः)

समर = युद्ध मे निपुण गवेष्टन सतधनु = पक्षरहुँ तकवा मे प्रवीण राजा सतधनु-
वा निवृत्त शत्रु = शत्रु के परास्त कयनिहार । आह्व = बुद्ध मे ॥

बलदेव औ श्रीकृष्ण—(ऊठि) एहि राजसिंहासन पर बैस शोभित करधु महाराज
उपसेन ।

उपसेन—जे आज्ञा वैधि हुनु भगवान् । (बैसैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—(बलदेवक प्रति) आर्य ! अहाँक स्वागत हो ।

बलदेव—बेस ।

श्रीकृष्ण—तात ! नन्द आदि सुख सँ छथि ?

बलदेव—अहाँक गुणसभक गान करैत वृजमे गम सुखहि सँ बसैत अछि ।

(तखन दीवारिक प्रवेश कय)

दीवारिकः—देव ! एकको दिअवरी ^{११}पदीहारभूमिए चिट्ठवि ^{१२} । [देव
एको द्विजवरः प्रसीहारभूमौ तिष्ठति ।]

श्रीकृष्णः—(स्वगतम्) तेन कुण्डिनपुरादागतेन भवितव्यम् । प्रागेव हरि-
वत्समेतेतेनम् । (प्रकाशम्) द्रुतं ^{१३}प्रवेशय । (ततः प्रविशति
द्विजः । श्रीकृष्णं बलदेवं च प्रणम्य पत्रं श्रीकृष्णाय ददाति । स
च बलदेवाय दत्तवान् ।)

बलदेवः—(“भूयो भूयो” इत्यादि-पद्यद्वयं [श्लोकसं० १३, १४]
वाचयति ।)

(सर्वे सादरभाकर्णयन्ति)

नमस्तेनः—द्विजराज ! कदा भविष्यति तद्विनम् ?

द्विजः—अष्टारभ्य तृतीय-दिने । (श्रीकृष्णं प्रति) विशेषतस्तु वाचिकमभि-
हितं नृपभीष्मकेण ।

श्रीकृष्णः—वक्तव्यं तत् ।

द्विजः - (पत्रं रावेदयति -)

दीवारिकः—देव ! एक ब्राह्मण दीआरि पर छाड़ छवि ।

श्रीकृष्णः—(मनहि मन) ओ कुण्डिनपुर सँ आयल होयताह । पहिनहि हरि-
वत्सल कहने छलाह । (मुनाकय) जरदी प्रवेश कराबहु ।

(एखन ब्राह्मण प्रवेश करैत छवि । श्रीकृष्ण ओ बलदेवकेँ प्रणाम कय
चिट्ठी श्रीकृष्णकेँ देत छवि आ ओ बलदेव केँ द्य देलनि ।)

बलदेवः—(“भूयो भूयो” श्लोकसं० १३, १४ दुनू पद्य बँचैत छवि ।)

(सभकेँओ आदरपूर्वक सुनैत छवि ।)

उद्यमेन—द्विजराज ! कहिआ होयत ओ दिन ?

द्विजः—आइ सँ लय तेसर दिन मे (श्रीकृष्णक-प्रति) विशेष-कय त मौखिक
समाद कहलनि अछि राजा भीष्मक ।

श्रीकृष्णः—बाजु से ।

नमोऽस्तु तस्मै जगदीश्वराय यः ^{१४}

सृजत्यवश्यस्यकिलं चराचरम् ।

भारावताराय भूवोऽबुता हरि-

ल्लब्धाऽवतारो वसुदेव-मन्दिरे ॥११॥

अवि च,

जानामि कृष्णं भगवन्तमाद्यं

जानात्यसौ नैव विमूढबुद्धिः ।

स्वमी मदीयस्तमयो मदान्ध-

स्तथाऽप्यवश्यं स्वकृपा ^{१५} विधेया ॥१२॥

अवि च,

स्वयंवरैऽस्मिन् नरदेवसंश्रुते

पुरं सप्त-गव्य मदीयमेतत् ।

तथा विधेयं स मनोरथो यथा

दृष्ट्वा भवन्तं परिपूर्तिमेति मे ॥१३॥

द्विज - (पद्य सभक द्वारा आवेदित करैत छवि ।) :—

ओहि जगदीश्वर के नमस्कार करैत छी जे सम्पूर्ण चर ओ अचर संसारक
सृष्टि करैत छवि, पालन करैत छवि तथा भक्षण (संहार) करैत छवि ।
सएह हरि पृथ्वीक भार उतारवाक लेल यमुदेवक घरमे अवतार लेने
छवि ॥११॥

आओरो—

हम आदि ईश्वर श्रीकृष्ण भगवान् केँ जनेत छियनि । मुदा, हमर पुत्र
मधुसौ अग्य सूर्ज स्वमी नहि जनेत छनि । तैयो अपन कृपा अवश्य
करयि ॥१२॥

आओरो -

मनुष्य ओ देवससँ भरल एहि स्वयंवर मे हमर एहि नगर मे आवि
तेना करी जाहि सँ हमर ओ मनोरथ अपनेकेँ देखि परिपूर्ण हो ॥१३॥

श्रीकृष्णः—सादृश-महाभागस्य इदमेव वक्तुमुचितम् ।

बलदेवः—अहो ! वाग्बिधान-नेपुण्यं कुण्डिनेश्वरस्यः^{१२} । द्विजराज ! अक्व
इयं यास्यामः । राजानः किं कुण्डिनं^{१३} समायताः ?

द्विजः—अथ किम् ? बहवो नृपाः गजाश्च-रथ-पदातिवृन्दैः सह तथैव
मिलिष्यन्ति ।

बलदेवः—महाराज ! यादवाधिप ! सज्जीभवन्तु सर्वं चतुरङ्गबलैः सह यादवा-
स्तत्र गमनाय ।

उग्रसेनः—देवदेव ! अनुजानीहि मां गृहं गत्वा तथाऽऽचरणाय । (इति यादवैः
सह निष्क्रान्तः ।)

बलदेवः—मयापि सम्प्रति विधामाद्य गम्यते ।

श्रीकृष्णः—यदभिरोचते भवते । (इत्युत्थाय तमनुनीय, पुनरुपविश्य च) द्विज-
राज ! कीदृशी वर्तते सा कुमारिका यामनिलक्ष्य सकल-राजस्यम-
ण्डली प्रचलिता^{१४} कुण्डिनं^{१५} प्रति, तदभिजायते^{१६} भवता ?

श्रीकृष्णः—ओहन महामुषक इमेह कद्वं उचित-धिक ।

बलदेवः—अहो ! कुण्डिनक राजाक वचन-विन्यासक पटुता ! द्विजराज !
हमराजाकति अबध्य जायव । राजासव कुण्डिनपुर पटु चि
मेलाह की ?

द्विजः—त आशोर की ? बहुत राजा हाथी-घोड़ा-रथ-सेनासभक संग
ओतहि भेटताह ।

बलदेवः—महाराज यादवराज ! चारु अङ्ग रथ-घोड़ा हाथी-पैदल संयुक्त
सेनाक संग सकल यादव ओतय जयबाक हेतु तैयार होयु ।

उग्रसेनः—देवदेव ! धर जाय तकर व्यवस्था करवाक हेतु हमरा आजा दिय ।
(यादवसभक संग बहार भय मेलाह ।)

बलदेवः—हमहु एखन विधामक हेतु जाइत छी ।

श्रीकृष्णः—जे नीक लग्य अहाँके । (ऊठि हुनक अनुमय कय, पुनः वैसि) द्विज-
राज ! केहुन छयि ओ कुमारी जनिक उद्देश्य कय सकलराजाक
समूह कुण्डिनपुरक हेतु बिदा भेल अछि, से अहाँके बुझल अछि ?

१६ - कुण्डिलेश्वर - क । १७ - कुण्डिलमायता - क । १८ - कुण्डिल -
क । १९ - तदभिजायते - ख ।

द्विजः—देवदेव ! कथं न जानामि, किन्तु दृष्टेय मया । ओतयथं तरशीर्षयै देव-
देवेन । (इति गीतेनावेदयतिः—)

[गीतसं०--२५]

राजकुमारि देखल हमे^{२०}, विधिवस सखि-सङ्गे ।

निष्ठा करै कुण्डि मनोभव, तिरिजल तसु अङ्गे ।

तड़ित उपर शशि, ता पर, अलधर अभिरामे ।

से जनि मेदनि संचर, तओ पाव उपाने ।

अरुन कमल मद मातल, भम मधुकर भोरा ।

मनसिजे व्याघ उड़ाओल, की^{२१} खड्गज-जोरा ॥

कीदहु मुख-शशि-पीउय, मित्र गुगल चकोरा ।

तसु लोचन देखि मानस, संशय पटु^{२२} मोरा ।

पञ्कज-कोरक निन्दक, तसु उरसिज—काँती ।

ते जनि जल वसि अहोनिशि, तप कर भलभाँती ॥

मध्य विनिन्दक केहरि, मिरिकन्दर भेला ।

मृदु उह-मुग देखि करिवर, लज्जित जनि भेला ॥

द्विज—देवदेव ! कियेक नहि जनस छी, हम त हुनका देखे कयलियनि ।
हुनक सौन्दर्य भगवान् सुनल जाओ । (गीतक द्वारा आवेशित करैत
छथि)।—

गीतसं०--२५

विधिवस=संयोग से । निद्र करै=अपना हाथे । कुण्डि=छराजिके,
चिक्कन वनाय (क्षुब्ध, कुतन्) । तड़ित=विजलोका । शशि=चन्द्रमा ।
मेदनि=पक्षी पर । अरुन कमल=लाल कमल पर । भम=धूमैत अछि ।
मधुकर=मोरा । भोरा=लुट हृदयक, भोलाभाला । मनसिजे व्याघ=
कामदेवरूपी शिकारी । मुख-शशि-पीउय=मुहलपी चन्द्रमाक अमृत । गुगल=
घोड़ा । पञ्कज-कोरक=कमलक कलीक । उरसिज=स्तन । मध्य=देहक बीच
(दोर)क निन्दा करयवला । केहरि=मिह । मृदु=कोमल । उहमुग=दूत
२० - हम - क । २१ - नकि - क । कि - ख । २२ - पटु - ख ।

थल-पङ्केरु-गञ्जित, तसु चरण निरेखी ।
अवनहि अवनत भय फुल, ते बुभिक्ष विखेखी ॥
गमने मराल वधूगन, तुलना नहि पावे ।
सुमति रमापति मने गुनि, रुकुमिनि हा गावे ॥

श्रीकृष्णः—द्विजराज ! ततस्ततः कथ्यतां विशेषतस्तस्याः शरीरशोभा ।
द्विजः—अपि च,

[गीत सं०—२६]

दिन दिन छिन होध पुरन^{२२}-चन्द ।
पुरल परामहि^{२३} देखि^{२४} अरविन्द ॥
कमल - युगल, विधु नहि एकठाम ।
की लय देव तसु वदन उपाम ॥
जजो विधि कोमल करवि प्रवाल ।
नव पल्लव दुति रह^{२५} चिरकाल ॥
ताहि मुधा - रस घरवि अमूल ।
तखने होअ तसु अधरक तुल ॥
दालिम बीज दसने जिति लेल ।
ते^{२६} फलमध्य तिरोहित भेल ॥

जीव । करिवर = हाथी । थल-पङ्केरु-गञ्जित = थलकमलके तिरस्कृत कर-
वला । अवनत = झुकिके । गमने = गति (चलवा) हाँ । मराल-वधूगन =
हंसी ॥

श्रीकृष्ण—द्विजराज ! तकर बाद कहू विशेष कय हुनक शरीरक सौन्दर्य ।

द्विज—आओरो

[गीत सं०—२६]

छिन = क्षीण । पुरन-चन्द = पूर्णचन्द (नायिकाक मुँह) । अरविन्द =
कमल के । कमल युगल विधु = दू कमलक संग चन्द्रमा एकठाम जमा भेल नहि
रहैत छथि । विधि = ब्रह्मा । प्रवाल = मूँगा । दुति = चमक । मुधा = अमृत ।

२२ = पुन - ख । २३ = परामे देखि - ख । २४ = यह - ख ।

उरसिजे^{२७} शीतल सिरिफल - भास ।
ते^{२८} कर सतत अकास - निवास ॥
पीठि उपर बेनी^{२९} भल छाज ।
तसु प्रतिविम्ब रोमावलि साज ॥
हरिपद प्रनत रमापति भान ।
सिंह नरेन्द्र सकल रस जान ॥

श्रीकृष्णः—द्विजराज ! विचित्र तस्याः सौन्दर्यमावेदयति भावान् । अहो
विधातु निर्माणकुशलता तवापि च वाग्विद्यमता ! ततस्ततः ?

द्विजः—अपि च,

[गीत सं०—२७]

हे माधव ! अपरुष तसु निरमाने ।

वैखट्ये^{३०} जत संस्रम मन अवतर, मुनिज कहिष अवधाने ॥ ध्रु० ॥
कनक-लता विज युगल सिरिफल, उपर उदित हिमधामे^{३१} ।
विधुमण्डल दुष्ट सञ्जन ता पर, मदन धनुष अभिरामे^{३२} ॥
तथिहु^{३३} छपर मनिआरि^{३४} भुजङ्गिनि, नील वरन तसु कांती ।
युगल विम्ब फल मध्य मनोरम, दालिम बीजक पांती ॥

अमूल = अमूल्य । अधरक तुल = ओरक तुल्य । दालिम = दाढ़िम, अनार ।
दशन = दाँत । तिरोहित = नुकायल । उरसिज = स्तन । सिरि-फल = बेल ॥

श्रीकृष्ण—द्विजराज ! अद्भुत हुनक सौन्दर्य वर्णित करैत छी अहाँ । अहो
विधाताक बनयबाक चतुराई, ओ अहूँक वचन कुशलता ! तकर
बाद ?

द्विज—आओरो—

[गीत सं०—२७]

निरमाने = बनाबट, मढ़नि । अवतर = अवतल अलि । अवधाने = साव-
धान । कनकलता = सोनाक लसीक । युगल सिरिफल = एक जोड़ा बेल ।
हिमधाम = चन्द्रमा । विधु = चन्द्र । मदन = कामदेव । मनिआरि भुजङ्गि-

२७ = पीठिक उपर बेनी छाज - क । २८ = धाम - ख ।

२९ = राम - ख । ३० = मनिआरि - ख ।

कनक मृणाल विसाल नाल विनु, लोहित युग धरविन्दा ।
तयिहुँ अर दसविध भय ऊगल, बिमल द्वितीयक चन्दा ॥
भय विपरीति कदलि-युग धिर रह, विनु दले परम विसाले ।
थल-अम्भोज मलानि रहित अति, चित्र देखल चिरकाले ॥
के वरनत तमु रूप असम्भव, सुमति रमापति भाने ।
सिंह नरेन्द्र महीपति एतमय, बुक सब युनक निधाने ॥

श्रीकृष्णः—द्विजराज ! सम्यग्निहितं भवता । युक्तैव नृपकुमाराणां तव-
लोकनस्पृहा ।

द्विजः—किञ्च,

निर्मनुमारव्यमति मंनोभू लावण्यमाकुण्ठ्य जगत्प्रसव^{३१} ।

सारं^{३२} समुद्रस्य ततः प्रयत्नात् तां सर्वसौन्दर्यमयीं चकार ॥१५॥

नि = मणिवाली सापिन । विम्ब = तिलकोड़ । लोहित = लाल । युग =
दुड़ा । अरविन्द = कमल । दसविध = दस तरहक । भय विपरीत = उनटा
भए । कदलि युग = दुड़ केराक धम्ह । दले = पानसँ । थल अम्भोज =
स्थलकमल । (सोनाक लता भेलि नायिका, ताहि मे श्रीफलक जोड़ा स्तन,
ऊपर ऊगल चन्दा मुँह, दुड़ लज्जन आँखि, धनुष काजर, सापिन दुनु
भौंह, मणि सिन्दूरक ठोप, तिलकोड़ ठोर दाड़िमक बीज दाँत, मृणाल बाँहि,
दुनु कमल हाथ, दस चन्दा दसो नह ओ केराक धम्ह जाँच भेल ।)

श्रीकृष्ण - द्विजराज ! यथार्थ कहल अहाँ । उचित छनि राजकुमार लोक,
निके हुनक देखबाक इच्छा ।

द्विज—आओरो—

सुन्दरीक वनयबाक विचार कय कामदेव तीगू लोकक सुन्द-
रता समेटि, सारभाग बहार कय यत्नपूर्वक ओहि सुन्दरीक रचना
कमलनि ॥१५॥

श्रीकृष्णः—अतः परं स्वयमवश्यं यास्यामः कुण्डिनम् । किन्तु स्वामी नृपसभा-
यामनादरं करिष्यति । अतस्तद्गृहगमनं न रोचते । तत्र च
कोऽम्बुपायः ?

द्विजः—प्रथमतो देवदेवेन कुण्डिनपुर-सचिवं गत्वा मनाक् स्थेयं, यावज्जालमा-
गें क्विमणी त्वामवलोकयति । ततः कथं कैशिकाभ्यां सर्वं भवदर्थं
सम्पादितमस्ति । तत्राऽवस्थातव्यम् ।

श्रीकृष्णः—(दीवारिकं प्रति) एतस्मै द्विजाय विश्वामार्थं शोभनं मन्दिरं
देयं^{३३}, दातव्यं च^{३४} सत्कार्यं-सर्वमुपचारम्, यथाऽसौ मार्गशेदं
विस्मरति तथा परिचरणीयश्च ।

दीवारिकः—सर्वं कर्जं मए कदव्वं । [सर्वं कार्यं मया कर्तव्यम् ।]

(द्विजः प्रणम्य निष्क्रान्तः)

(नेपथ्ये—भो ! भो ! निज-दोईष्ट-विक्रम-सस्तजितऽशेषशत्रुवो यादवाः !

पुरन्दरेणाऽप्यनुलङ्घितशासनी महाराज-श्रीमदुग्रसेनो वः समादिशति—

श्रीकृष्ण—सँ आज स्वयं अवश्य जायब कुण्डिनपुर । मुदा, स्वामी राजसभा
मे अनवर करत । अतः ओकर ओहिठाम जायब नहि नीक लगैत
अछि । ताहि मे कौन जयाय ?

द्विज—पहिने देवदेव स्वयं कुण्डिनपुरक समीप जाय कनेक सकल जाय, यावत्
शिङ्गकी सँ हनिमणी अपनेके देखि लेथि । तकर बाद कथ ओ कैशिक
नामक राजा, सब किछु अपनेक लेल ओरिअओने छथि । ओतय रहल
जाय ।

श्रीकृष्ण—(दीवारिकक प्रति) एहि बाह्यणके विश्वामक हेतु सुन्दर भवन दएह,
ओ स्वागतक सब सामग्री बहूह, जाहि सँ ई बाटक थाकनि के
विस्तारि जाथि तथा दिनक टहल करिहह ।

दीवारिक—सब काज हुम करब ।

(बाह्यण प्रणाम कय बाहर गेलाह ।)

(नेपथ्य-से—हे हे ! अपन बाँहिकी खंटाक पराक्रमसँ सकल शत्रुके भय
भीत कयनिहार यादवलोकनि ! इन्द्रक द्वारा जनिक आदेशक बलघन नहि
भय सकल से महाराज श्रीमान् उग्रसेन अहाँलोकनिके आदेश देत छथि ।—

सृष्टिः - रोचिरभूद् विगतद्युतिः

नैवसि नो विलसन्ति च तारकाः ।

अरुणिमेव सुरेश - दिगम्बभूत्

तपदि तून्मिरो रजनी गता ॥१६॥

तेन च,

मोक्षयन्ता मन्दुराभ्यो ज्वजित-पवना मञ्जुवर्णास्तुरङ्गाः

धोवयन्ता स्यन्दनेषु द्रुतमथ विगलद् दानमत्ताः करोद्भ्राः ।

वारीभ्यो मोक्षनीयास्तदनु च विविधैर्भूषणैर्भूषणीयाः

प्रस्थातव्यं भवद्भिर्मधुरिषु-सहितैर्मन्दिरं भीष्मकस्य ॥२०॥

(पुनर्नेपथ्ये पुनर्भूषणैः)

श्रीकृष्णः - (सभागृहमागत्य) दासक ! तुरङ्गैः संयोज्य तूर्णं मदीयं रथमा-
नय ।

दासकः - (प्रणम्य रथं सज्जोक्त्याऽऽनीय) देवदेव ! एष मया सज्जीकृतो रथः ।
आरोहत्वायुष्मान् ।

शीतल प्रभा बला (चन्द्रमा) कान्तिहीन भय गेलाह, आकाश मे तरेगन
रोहो नहि अछि, पूव दिशा ललोन लगैत अछि ओ ई राति शीघ्र समाप्त भय
मेल ॥१६॥

आ ताहि सँ—

वेगें ह्याकें जितनिहार सुन्दर रंगक घोड़ासभ केँ घोड़ासार (मन्दुरा)
सँ खोलि देल जाय ओ रथसभ मे सटवय जोति देल जाय, चबैत मदर्स मस्त
बड़का हाथीसभकेँ हथिसार सँ खोलि देल जाय ओ अनेक अलंकार सँ सजा-
ओल जाय आ तखन अहाँलोकनि कृष्णक संग राजा भीष्मकक भवनक हेतु
प्रस्थान करैत जाइ ॥२०॥

(केर नेपथ्य मे रणवाद्य बजैत अछि)

श्रीकृष्ण - (सभाभवन आनि) दासक (कृष्णक सारथी) ! घोड़ा सभ सँ युक्त
कय भट दम हमर रथ आनू ।

दासक - (प्रणाम कय रथ सजायकेँ आनि) महान् देवता ! इयेह हम रथ तैयार
कयल अछि । चिरजीवी अपने एहि गर चढ़ल जाओ ।

(श्रीकृष्णः बलदेवमुग्रसेनं च नगररक्षार्थं प्रतिनिवर्त्य स्वयं रथारो-
हणं नाटयति । ततः सर्वे प्रचलिताः । तत्र गीतम्—)

[गीतसं०—२८]

कुण्डिन^{२३} नगर चलल मोनिष^{२४} ।

सुनि^{२५} स्वयंवर अतिसानन्द ॥

सहस^{२६} सहस चलु रथ, मातङ्ग^{२७} ।

तुरग^{२८} - निबह बहुविध तसु रङ्ग ॥

जूथे^{२९} जूथे^{३०} कत चलल पदाति ।

देखि चकित होअ सकल अराति ॥

सेनापति सथे यादव वीर ।

छत्र - धरम रत्न - करम सुधीर ॥

हुन्नुभि भेरी शंख मुदङ्ग ।

अदिरल बाजन बाजय सङ्ग ॥

भीष्मदेव नगर सनिधान ।

हरि उपगत भेल दिन अवसान ॥

हरिपद प्रनत रमायति भान ।

बुभु नृप सिंह नरेन्द्र सुजान ॥

(श्रीकृष्णः बलदेव तथा उग्रसेन केँ नगरक रक्षाक हेतु धृष्ट्या
स्वयं रथ पर चढ़वाक अभिनय करैत छथि । तखन सभ चललाह ।
ताहि मे गीत ।)

[गीतसं०—२९]

सहस = सहस्र, हजारक हजार । मातङ्ग = हाथी । तुरग-निबह =
घोड़ाक समूह । जूथे = झुंड बान्हि । पदाति = पैदल सेना । अराति = शत्रु,
हुन्नुभि भेरी = डोल ओ नगाड़ा । अदिरल = लगातार । सनिधान = निकट ।
हरि = कृष्ण । उपगत = उपस्थित । दिन अवसान = दिनान्त मे ।

२३ - कुण्डिन - छ । २४ - सुनिज - क । २५ - सहस सहस - छ । २६ -
तुरङ्ग - छ । २७ - जूथ जूथ - क ।

श्रीकृष्णः - एतैव नृपभीष्मकस्य राजधानी द्रष्टव्या भवद्भिर्मयापि । तत् प्रा-
सादसंनिहित-रथधाया मनाक् स्थित्वा वीततैयमनुचिन्तयामि ।
(इति सेनाद् बहिर्भूय रथ्यामध्ये स्थितः । शङ्खञ्च नादयति ।)
(ततः प्रविशति सौधस्थिता हविमणी, तत्सखी मुदक्षिणा, सुशोभना च ।)
मुदक्षिणा - सहि सुशोभने ! अञ्चरिअं तडाअ^{३६} मग्गे संलसहो सुणीअदि ।
[सखि । सुशोभने ! आश्चर्यं !! तद्भागमार्गे संलसहः भूयते ।]
सुशोभना - सहि मुदक्षिणे ! भअवदो सिरिकण्हस्स पञ्चजणं थिअ^{३७} वज्जि-
अ । अण्हस्स ण^{३८} कउ एरिसो सहो । तयो बलहोए चिट्ठिअ
मए^{३९} सह अवलोएहि । [सखि मुदक्षिणे ! भगवतः श्रीकृष्णस्य
पाञ्चजन्यमिव नाद्यते । अस्यस्य न कस्यापि हृद्दशः शब्दः । ततो
बलभ्यां स्थित्वा मया सह अवलोक्य ।]

मुदक्षिणा - (अवलोक्य सानन्धं) सहि एसो वलु अहिणव-जलहर वल साम-
लङ्को विविह-मणि-जडिअ-कणअ-किरीड-मण्डिअ-मत्थओ निअ-

श्रीकृष्ण - इयेह राजा भीष्मकक राजधानी थिक जे अहाँलोकनिके ओ हमरो
देखक थिक । त कोठाक सटले गली मे कनेक रुकि मरडक प्रतीक्षा
करेछ छी । (सेना सँ बहार भय गलीक बीच मे ठाढ़ भय संख
बजवैत छथि ।)

(तखन प्रवेश करैत छथि कोठा पर ठाढ़ हविमणी ओ हुनक सखी मुद-
क्षिणा ओ सुशोभना ।)

मुदक्षिणा - सखि सुशोभने ! आश्चर्यं !! पोखरिक बाट पर हावक शब्द सुनि
पड़ेछ ।

सुशोभना - सखि मुदक्षिणे ! भगवान श्रीकृष्णक पाञ्चजन्य संख जेना बजैत
अछि । दोसर कोनो संखक एहन शब्द नहि होइत छैक । तेँ
छत पर ठाढ़ भय हमरा संग देखह ।

मुदक्षिणा - (देखि आनन्दपूर्वक) सखि ! ई तेँ नवीन मेव मनक ब्यामल देह^{४०}
बला, अनेक मणि जडाओल सोनाक सुकुट माँथ पर रखने अपन

३६ - तराअ - क ख । ३७ - अण्हस्सणं कय क, अण्हस्सणं कयु ख ।

३८ - सहीए - क ।

काउवख -^{४१} विवखेव -^{४२} सम्मोहिदासेस-परिअणो^{४३} रहोवरि तिहु^{४४}
अणेवक-मणहरो अपुवो पुरिसो दोसदि । एसो जेव सिरि-
कण्हो भोदिति । [सखि ! एष खलु अभिनव-जलहर इव श्या-
मलाङ्को विविध-मणि-जटित-कनक-किरीट-मस्तको-निजकटाक्ष-
विक्षेप - सम्मोहिताऽशेषपरिजनो रथोपरि विभ्रान्नेक-मनोहराः
अपूर्यः पुरुषो दृश्यते । एष एव श्रीकृष्णो भवतीति ।]

हविमणी - महि ! कि दाणि अलीअ-वअणेहि मं समरसासेसि । कुनो मे
तारिसं भाअथेअं ? [सखि ! किमिदानीम् अलौकावचनं मां
समाश्वासयसि ? कुनो मे तादृशं भाग्येवम् ?]

(ततः प्रविशति वैद्यतेयः)

वीततैयः - (प्रणम्य) भगवन् देवदेव ! किमयेमनुचिन्तितोऽस्मि ?

श्रीकृष्णः - सम्प्रति विश्वंभुरं गत्वा ऋध-केशिकाभ्यां मदागमनं विज्ञाप्य भावता
सीम्यरूपेण तत्र स्थेयम् । अहमपि सपरिवारस्तत्पुरमागमिष्यामि ।
वाक्यं मया तत्रैव भवने निवेद्यम् ।

कटाक्ष प्रस रि सकल परिवारके मोहित कयने, रथ पर तीनूलोक
मे सबसँ बेसी सुन्दर अपूर्य पुरुष देखाइत छथि । इयेह श्रीकृष्ण
भय मकैत छथि ।

हविमणी - सखि ! की एखन व्यर्थक बात सभा सँ हमरा परतारैत छह ? कतय
सँ हमर ओहन भाग्य होयत ?

(तखन मरड प्रवेश करैत छथि ।)

वीततैयः - (प्रणाम कय) भगवन् परम देवता ! किशेक बजाओल अछि (स्म-
रण कयल अछि) ?

श्रीकृष्ण - एखन विदर्भ-नगर जाय कय ओ केशिक महाराज केँ हमर आन-
मनक सूचना दय अहाँ यान्त भय ओतय रह्यौ । हमहूँ सपरिवार
ओहि नगर आएव, ओतहि अहाँकेँ जे कहवाक अछि से कहब ।

(मरड प्रणाम कय बिदा भाग गेलाह ।)

४१ - कडकव - ख । ४२ - विवखेव - ख । ४३ - परि अणो - क ख ।

(गुरुः प्रणम्य प्रचलितः)

सखी—भट्टिदारिए ! दिट्टिआ बड्डसि । एसो सच्चं सिरिकण्हो भोवि । गुरुं
दंसणेण अम्हाणं संसओ पणट्ठो । ता उट्टे हि, उट्टे हि, अवलोएहि
कण्हं । [भट्टिदारिके ! दिट्ट्या बड्डसे । एष सत्यं श्रीकृष्णो भवति
गुरुदर्शनेन अस्माकं संशयः पूर्णतः । हृदुत्तिष्ठोत्तिष्ठ, अवलोक्य
श्रीकृष्णम् ।] (इति करयो गृहीत्वा उत्थापयतः ४५ ।)

हकिमणी—(अवलोक्य सतसा प्रणम्य च सानन्दं सखीभ्यां सह गायतिः—)

[गीतसं० - २८]

पुरुष सुकुते हमे आज । हे सखि ! नयन देखल वदुराज ॥
नव घन सामर देह । हे सखि ! हेरितहि उपजु सिनेह ॥
पीत वसन वनमाल । हे सखि ! भूषन सकल विसाल ॥
इन्दु-वदन अभिराम । हे सखि ! जनि महि अभिनय काम ॥
विहि विनिवेदिअ तोहि । हे सखि ! मिलल देव पुन ४६ मोहि ॥
सुमति रमापति भान । हे सखि ! मैथिल नृप रस जान ॥

कुतू सखी—राजकुमारी । भागमति छी । इमेह सत्तो श्रीकृष्ण थिकाह ।
गुरुके देखि हमरालोकनिक सन्नेह दूर भेला से उट्ट, उट्ट, देखू
श्रीकृष्णके । (कुतू हाथ धर उठवैत छथिन्ह ।)

हकिमणी—(देखि मनहीं प्रणाम कर आनन्दपूर्वक सखीक संग गथैत छथिः—)

गीतसं०—२९

पुरुष = पहिलुका । सुकुते = पुण्य सी । वदुराज = श्रीकृष्णके ।
नवघन-सामर = नवीन मेघक समान श्यामल । पीत वसन = पीयर
वस्त्र । इन्दु-वदन = चन्द्रमाकरी मुख । अभिराम = सुन्दर । जनि =
जेना । महि = पृथ्वी पर । काम = कामदेव । विहि विनिवेदिअ
= अपन भाग्य बुझौत छी ॥

४५—उत्थापिता - ख । ४६—मिलन देवपुरे—ख ।

सुरक्षिणा—सहि हकिमणि सिरिकण्हं देखिअ कीरिसं भोविह हियअं ता पुणो
थि कहैहि । [सखि हकिमणि ! श्रीकृष्ण प्रेक्ष्य कीदृशं भवत्या हृदयं,
सत् पुनरपि कथय ।]

हकिमणी - सुनहु विअसहो । [शृणोतु प्रियसखी ।]

[गीतसं०---३०]

सुनि जनिअ ४७ गुणगान ना । मन न सोहाएब आन ४८ ना ॥
कमल-नयन वदुराज ना । विविधस ४९ देखल आज ना ॥
वदन-कलानिधि देखि ना । मन मोर हरल विसेधि ना ॥
कि कहव मोहन-रस ना । कोटि मदन अनुक्षण ना ॥
तहिन विचारिअ काज ना । जे होअ हरिक समाज ना ॥
सुमति रमापति भान ५० ना । मैथिल नृप रस जान ना ॥

सुरक्षिणा—सहि ! जइ एरिणी देए अस्सि भत्ती बट्टिद तदो जत्ति जेव कण्हो
पाणिमहं करिअसदि । जओ एसो भक्तवत्सलो देखो । [सखि ।
यदि एनादृशी देवेऽस्मिन् भक्ति वर्त्तते तदा क्षटित्वेव कृष्णः पाणिग्रहं
करिष्यति । यत एष भक्तवत्सलो देवः ।]

सुरक्षिणा—सखि हकिमणि ! श्रीकृष्णके देखि कहैत अहाँक हृदय भेल अछि
से फेरो कह ।

हकिमणी - सुनहु प्रियसखी—

गीतसं० - ३०

विविधस = भाग्यसँ संयोगसँ । वदन-कलानिधि = मुखचन्द्र ।
कोटि मदन = ऊँचोरो कामदेवक सन । हरिक समाज = श्रीकृष्णक
सम्पर्क ।

सुरक्षिणा—सखि ! यदि एहन भक्ति अहाँक एहि देव मे अछि तँ जल्दीये कृष्ण
विवाह करताह । कियेक तँ ई भक्तवत्सल देव छथि ।

४७—सुनिहक - ख । ४८ - आन - ख । ४९ - वसे - ख । ५० - भाव - ख ।

सुशोभना—सहि यदुवीराणां बलेहि अन्तरिदो देवदेवो, तदो उध्विसम्ह ।
[सखि ! यदुवीराणां बलरन्तरितो देवदेवः, तत् उपविशामः ।]
(इति सर्वा उपविशन्ति । इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

॥इति रविमणीपरिणये कुण्डिनपुर-गमनं नाम तृतीयोऽङ्कः ॥

सुशोभना—सखि ! वीर यादवक सेनाक द्वारा अहं भय गेलाह देवदेव श्रीकृष्ण ।
ते बेसेत जाह ।

(सभ बेसेत छथि । तखन सभ बहार भेलि ।)

रविमणीपरिणय मे कुण्डिनपुरगमन नामक
तेसर अंक समाप्त ॥

अथ चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशतः कथ-कैशिकी)

[गीतसं०—३१]

हरिपद	भगत	विदर्भ	नरेश	।
कथ	कैशिक	भूपति	परवेश	॥
कदए	प्रनाम	भगते	अनुरूप	।
अञ्जलि	वांछि	निवेदधि	भूप	॥
हमर	भयन	हरि	करिअ	समाध
बलिअ	सकल	यादवगन	साथ	॥

चारिम अंक

(कथ ओ कैशिक प्रवेश करैत छथि ।)

गीतसं०—३१

हरिपद भगत = कृष्णक चरणक भक्त । विदर्भ नरेश = विदर्भदेशक राजा

भगत बल्लल तसु भगति विचारि ।
अतिकरुणामय बल्लल मुरारि ॥
मुमति रमावति भन परमान ।
भाव अधीन सदत भगवान ॥

श्रीकृष्णः - (तद्गृहं गत्वा परिक्रम्यावलोक्य च) महाराज कैशिक ! सर्व
मदर्थं भवद्भ्यां सम्यक् सम्पादितम् । किन्तु यादवेभ्योऽपि निवास-
स्थानं देयम् ।

कैशिकः - देवदेव ! स्थानमिति कथमुच्यते ? किन्तु प्रागेव मया तेषामर्थं
कृतानि मन्दिराण्येव सन्ति । (ततस्तदधिकारिणं पुरुषमाहूय)
अप्यपविशतां यादवेभ्यः प्रत्येकं निवासभवनं सम्पादनीयमेष तत्र तत्र
सर्वोपचारः ।

पुरुषः - जं देवो आपदेदि । [यद् देव आज्ञापयति ।] (इति तथा कृतवान् ।)

कैशिकः - देवदेव ! इहं सिंहासनमासासोपनिवस्तु देवदेव । इहं सितच्छत्रमिमे
चामरे च गृहाण ।

कथ-कैशिक । भगत बल्लल = भक्तवरसल ।

श्रीकृष्ण - (हुनक घर जाय घूमि ओ देखि) महाराज कैशिक ! सबकिछु हमरा
लेल अहाँ दुन गोटा (कथ ओ कैशिक) नीकजकाँ तैयार कयने छी ।
किन्तु यादवोलोकनिकेँ डेरा दियन्हु ।

कैशिक - देवदेव ! स्थान दियन्हु से की कहैत छी ? किन्तु पहिनहि हम हुनका
लोकनिक लेल घरे भनबाय लेने छी । (तखन ओहि घरक अधिकारी
केँ बजाय) यादवसभमे प्रत्येककेँ एक एक घर निर्धारित कय दिह-
न्हु ओ सभठाम उचित सकलसामग्रीक व्यवस्था कय दियन्हु ।

पुरुष—जे सरकारक आज्ञा । (तहिना करैछ ।)

कैशिक—देवदेव ! एहि सिंहासनकेँ पात्रि बैसल जाओ भगवान् । ई उज्जर
छत्र ओ ई दुन चामर लेल जाओ ।

(श्रीकृष्णः समुपविशति । कथ-कैशिकी श्रीकृष्णस्य चरणौ
प्रक्षाल्य तज्जलं शिरसि धत्तः, चामरे चावाय वीजयतः । उपचारैः
सम्पूज्य च गीतेन वाच्यमावेदयतः ।)

विहागरा [गीतसं०-३२]

पाप-मिवह गेल, जनम सफल भेल, पदपङ्कज तुअ देखि ।
गृह आगमने सकल कुल उधरल, सुकृत हलव कोने लेखि ।
माधव । सुनिअ विनति वजराज ।
पुलके पुरल तनु, हरण पुलिअ जनु, जहिन होअ मोहि आज ॥धृ०॥
जतपति, पालन, प्रलयक कारन, सीन भुवन तुअ भार ।
असुर अंस नृपवंस विध्वंसन हेतु मनुज अवतार ॥
रङ्गभूमि सिंहासन सङ्कट, जनु होअ भूप-समाज ।
ते हुमे हरणित भय विनिवेदिअ, अङ्गसहित निज राज ॥
चामर छत्र कनक सिंहासन, रतन कोथ अवशेष ।
सकल निवेदल दुष्ट सहायरे, प्रात करव अभिषेक ।
कैशिक नृपति मुरारि भगति गति, सुमति रमावति भान ।
सिंह नरेन्द्र विविध गुण बिन्दक, मैथिल नृप रस जान ॥

(श्रीकृष्ण वैसेत छथि । कथ ओ कैशिक श्रीकृष्णक चरण
पसारि ओकर जल माथ पर लेत छथि । चामर लय होकेत छथि ।
पूजाक सामग्री सभ सँ पूजा कथ गीतक द्वारा कथ्य आशय निवेदित
करैत छथि :-

राग विहागरा - गीतसं० - ३२

निवह = समूह । उधरल = उद्धार भेल, सद्गति पथोलक । सुकृत
= पुण्य । हलव = प्रकट करब । पुलके = क्षान्धे । तनु = देह । असुर
अंस = दैत्यक अवतार । नृपवंस = राजाक वंशक । विध्वंसन = नाशक ।
रङ्ग = युद्ध । अङ्गसहित = अपन देह सहित । अभिषेक = राजतिलक ।
मुरारिभगति गति = कृष्ण भक्तिक स्वरूप । गुण बिन्दक = गुणग्राही ॥

श्रीकृष्णः - युययो भक्तिमयलोचन मयापि स्वीकृतमिदम् ।
(प्रविश्य चित्राङ्गद-नामा देवदूतो गीतेनावेदयति ॥)

चित्राङ्गदः -

गीतसं० - ३३

हरि अभिषेक करिय नृप कैशिक, कइए परम सम्मान ।
ताहि सिंहासन आनि बैसाओल, जाहि चढ़ल नहि आन ॥
कह सुरपति-दूत । ई सवे तोहि कहयि पुरहूत ॥धृ०॥
से बुझि देवराजे सिंहासन, सकल रतनमय आज ।
कनक-दण्ड सित छत्र पठाओल विवध विभूषण साज ॥
राज इन्द्र अभिषेक महीतल, न थिक देव अधिकार ।
ते कारने अनुमानि पुरन्दर कथ-कैशिक देल भार ॥
अभ्यञ्ज,

भूप-कुमारि स्वयंवर उपगत, जत जत अछि महिपाल ।
सबहि हुकार करिय नृप कैशिक, हरि अभिषेक विसाल ॥
से सुनि जे भूयति नहि आओल, तुअ मन्दिर नरपाल ।
हरिक बध्म भय अवन-मण्डल, से ने रहत चिरकाल ॥

श्रीकृष्ण - अहाँ दुनू मोटाक भक्ति देखि हमहूँ एकरा स्वीकृत कयल ।
(इवेन कथ चित्राङ्गद नामक देवताक दूत गीतक द्वारा कहैत छथि ।)

गीतसं० - ३३

चित्राङ्गद - हरि अभिषेक = श्रीकृष्णक राजतिलक । कइए = कयके । सुरपति-
दूत = इन्द्रक दूत । पुरहूत = इन्द्र । कनक दण्ड = सोनाक डंटा सँ
मुक्त उजरा छाता । राज इन्द्र अभिषेक = राजासबहिक मध्य
जम्बूद्वीप राजा होयबाक राजतिलक । महीतल = पृथ्वी पर ।
पुरन्दर = इन्द्र ।

आओरो -

भूपकुमारि = राजकुमारीक । उपगत = उपस्थित । हरिक बध्म
= कृष्णक हाथे बध करवाक योग्य । अवन-मण्डल = पृथ्वी पर ।

सुरपति - दूत उकुति नरपति सजो सुमति रमापति भान ।

सिंह नरेन्द्र सकल याचक गति, मिथि जापति रस जान ॥

किञ्च सकल तीर्थ-वारिपूरितं दिव्यप्रभ-भयमभिवेकनिमित्तं
कनक-कलशाढकं चाऽखण्डलेन प्रेषितमिदम् ।

राजानी—(गह्वर्यं) शिरसि धृतावावाभ्यां देवराजाऽनुज्ञा । कः कोऽयं भोः ।

प्रतीहारः—(प्रविश्य) एसोह्मि, आपवेदु महाराओ । [एवोऽस्मि, आज्ञापयतु
महाराजः ।]

केशिकः—इदं पत्रमादाय शटिति कुण्डिनपुरं प्रयाहि । वक्तव्यं च नृपेण—
“आवाभ्यां देवदेवस्य भगवतो वामुदेवस्य राजेन्द्राभिवेको विधेयः
तेन भावद्विरनाऽवश्यमागन्तव्यम् । यस्तु वागमिष्यति सोऽस्य
वक्ष्यो भविष्यतीति देवराजेनाऽऽदिष्टमिति” ।

प्रतीहारः—जं आपवेदि देओ । [यदाज्ञापयति देवः ।]

(इति निष्क्रम्य रङ्गभूमिं गतः)

सुरपतिदूत = इन्द्रक दूतक । उकुति = कथन ॥

आओर ई जे, सभ तीर्थक जल सौ भारल दिव्य सुगन्ध सौ युक्त
अभिवेकक लेल सोनाक आठ टा ई धंल इष्ट, पठओलनि छलि ।

दुनू राजा - (आनन्द सौ) हम दुनू गोटा देवराजक आज्ञा केँ माँथ पर चढ़ा-
ओल । क्यों छलि ?

प्रतीहार—(प्रवेश कय) इयैह हम छी, महाराज आज्ञा देख ।

केशिक - ई चीठी लय शीघ्र कुण्डिनपुर जाह ओ राजासभकेँ कहबहुन्ह जे -
‘हमरादुनू गोटा देवदेव भगवान् श्रीकृष्णक राजेन्द्राभिवेक
(महान् राजतिलक) करब । ताहि कारण अहाँसभ एतय अवश्य
अवैत जाइ । जे नहि आयब से हिनक वक्ष्य (वधक योग्य) होयब -

ई इन्द्रक आदेश छलि’ ।

प्रतीहार - जे महाराजक आज्ञा हो । (ई कहि बहार भय रङ्गमञ्च पर
गेठ ।)

भीष्मकः—(रामिनीं प्रति) युवराज ! भवता जरासन्धादिभिः सह रङ्गभूमे-
रक्षन्त्यस्वकारणाद् अत्रैव स्थातव्यम् । देवराजस्याऽप्यनुमतमेव
तत् । गच्छन्तु चाऽन्ये भूपाला मया सह विदर्भनगरम् ।

रक्षमी - यद्यभिरोचते ताताय ।

(ततः सर्वे नृपभीष्मकं पुरस्कृत्य केशिक-भवनं गताः, भीष्मकः
श्रीकृष्णमवलोक्य प्रणतिं कर्तुं मुद्यतः ।)

श्रीकृष्णः - महाराज ! नृप-लक्षणा ययसापि च त्वमेव नः पूज्योऽसि । (इति
विनिवार्य करे गृहीत्वा सिंहासनांतरे समुपवेशयति* ।

(केशिकः प्रत्येकं तान् पाद्यादिभिरभिनन्दयति ।)

विवाङ्मदः - महाराज केशिक ! समागताः सर्वे नृपाः । देवराजो विमानमा-
रुह्य देवैः सह गन्धर्व वक्ष्साऽप्यरोभि गीयमानः कृष्णाऽभिवेक-
दर्शन-लालसो दिवि स्थितस्त्वामादिशति । तत् स्वर्यतां, स्वर्यताम् ।

भीष्मक - (रक्षमीकं प्रति) युवराज ! अहाँ जरासन्ध प्रभृतिक सङ्ग रङ्ग-
भूमिकेँ मुन्न नहि रखबाक कारण एतहि रहब । देवराजहुक से
अनुपेदिते छलि । आन राजासभ हमरा सङ्ग विदर्भ नगर चलथु ।

रक्षमी - जे विचार पिताजीक ।

(तखन सभ भीष्मक केँ आगू कय केशिकक भवन गेलाह ।

भीष्मक श्रीकृष्णकेँ देखि प्रणाम कयबाक हेतु उद्यत भेलाह ।)

श्रीकृष्ण - महाराज ! राजाक लक्षण ओ अवश्यतु मँ अहीं हमरालोकनिक
पूज्य छी । (रोकि हाथ ध्रुव दोसर सिंहासन पर बैसबैत छथि ।)

(केशिक प्रत्येक राजाकेँ पाय अर्घ्य आदि सौं सात्कार करैत छथि ।)

विवाङ्मद - महाराज केशिक ! यम राजा आदि गेलाह । विमान पर चढ़ि
देवतालोकनिक संग गन्धर्व, वक्ष ओ अप्सरासभ सँ स्तुति कयल
जाउन देवराज इन्द्र कृष्णाभिवेकक दर्शनक लालसा सँ मुक्त भय
आकाशमे विद्यमान छथि ओ अहाँकेँ आदेश दैत छथि । तँ
शीघ्रता करू, शीघ्रता करू ।

(कथ-केशिकी सानन्द कनक-कलशभ्यस्तीर्थ-सलिलमादाय श्रीकु-
णस्थ^{११} शिरसि राजेन्द्राभिषेकं चक्रतुः । तदा तत्पुरुषस्थितो गायन्ति
विहागरागेण गीतम्:-)

[गीतसं०---३४]

हरष कहव कत आज सजनी ।
अतिप्रमुदितमति केशिक भूपति, हरिहि देल विजराज ॥ ३४ ॥
कनक-कलश सओ मुरसरि जल लय, विविध सुगन्धिक साथ ।
असिलोहित सहकारक पल्लवे, सींचिथि यहुपति - साथ ॥
कुंकुम रीचन मलयज मृगमद^{१२}, तिलक कइए^{१३} हरि - भाल ।
कंचन रजत विभूषन बहुविध, वसन देथि सुविमल ॥
से देखि भीषमदेव महामति, मनि - मुकुता बहुमूल^{१४} ।
हरषि देथि हरिपद अवनत भय, अनुपम रुचिर दुकूल ॥
अत जत भूष समागत कुण्डिन, सबहुं कयल घन-दात ।
अंगनित तत वदनय के जानय, सुमति रमापति भान ॥

(कथ ओ केशिक आनन्दपुर्णक सोनाक घेलसभ सँ जल लय श्रीकु-
णक माँय पर राजेन्द्राभिषेक (महाराज होयवाक अवसर पर जलक
सिञ्चन) कयलनि । ससन ओहि तगरक स्त्रीगण विहाग रागक द्वारा
गीत गबैत छथि ।)

गीतसं०—३४

अतिप्रमुदित—अतिप्रसन्न। हरिहि—कृष्ण के। कनककलश—सोनाक
घेल सँ। मुरसरि—गङ्गाक। लोहित—लाल। सहकार—आम। मलयज
—श्रीखण्डधानन। मृगमद—कस्तूरी। कंचन—सोना। रजत—चाँदी।
वसन—वस्त्र। अवनत—झुकि। रुचिर दुकूल—सुन्दर वस्त्र ॥

अपि च,

[गीतसं०---३५]

हे सखि ! कहव कओने बिसेधि ।
जे होअ^{१०} आनन्द सुखक सदन, हरिक^{११} वदन देखि ॥ ३५ ॥
लय करै तण्डुल दूवि मनोहर, बाभन वेदे^{१२} चुमाव ।
जूथे जूथे यनिता गुन नावय, कत^{१३} न लावय भाव ॥
मुरज साल धुनि, सुललित मनै गुनि, गान करय^{१४} नट नाच ।
भेष धरय कत, पाव सकल तत, जत जत जे जन जाच ॥
उरवसि रम्भा सहित मेनका, गगन नाच अतिरेक ।
किन्नर, शङ्कर सविपति सन्निधि, गाव बजाव अनेक ।
कय अति हरषे^{१५}, कुसुमक वरषे, सुखल देव - समाज ।
गाए रमापति, हरिपद घय मति, वृषाधि मैथिल - राजा ॥

श्रीकृष्ण—(केशिक प्रति)

अनेन तव दानेन भक्त्या च कथ-केशिकी ।

चतुर्थे^{१६} - फलपाप्तिस्तथाऽस्तु नियतं भुवि ॥ ३५ ॥

आओरो—

गीतसं०—३५

बिसेधि—अधिक कय। सदन—घर (सुखक घर—अतिशय सुख)।
तण्डुल दूवि—दूबितत। जूथे—झुण्ड बान्हि। यनिता—नारी। मुरज—
सबला। जाच—महैत आछि। अतिरेक—अतिशय। किन्नर—देवताक
गायक। शङ्कर सविपति सन्निधि—महादेव ओ इन्द्रक समीप मे ॥

श्रीकृष्ण—(केशिकक प्रति) हे कथ ओ केशिक! अहाँक एहि दान ओ भक्ति सँ
अहाँकेँ एहि पृथ्वी पर नियतरूपे^{१७} धर्मार्थकाममोक्ष ई चारु पुरुषार्थ
प्राप्त होअओ ॥ ३५ ॥

केशिकः—(प्रणम्य अञ्जलि बद्ध्वा) देवदेव !

किमलभ्य भगवति १५ प्रसन्ने जगदीश्वरे ।

ततो याचेऽचलाभक्ति रमयि देव मुहुर्मुहुः ॥२१॥

श्रीकृष्णः—(विहस्य तथास्तु, (भीष्मकं प्रति गीतेनादिशति बिहागरागेण) —

[गीत सं० - ३६]

भीष्मदेव सुनिज विनिवेदन, मन जनु करिअ मजान ।

एक सुता वर एके होयत १५^{१५}, जगत सकल जन जान १७ ॥११॥

हे नृप ! करिअ स्वयंवर काज ।

शुभ सम्पति लिअ, ताहि सुता दिअ, जे समुचित महाराज ॥१२॥

जे विधि एहि निमन्त्रण उपगत, तुअ मन्दिर सब भूप ॥

ते विधि हमहुँ समागत कुण्डित यदुवल लय अनुरूप ॥१३॥

१०हमर समागत दोष बुझिअ जनु, दिअ निज कन्या दान ।

हम बाधक नहि होएअ स्वयंवर, नृपवर कस अनुमान ॥१४॥

जे जन कन्या - विवाह विधन कर, निवसय नरकक कू ।

सुमति उमापति उकृति शास्त्र कह, जानधि मिथिला - भूप ॥१५॥

केशिक—(प्रणाम कय आँजुर बान्हि) देवदेव ! संसारक ईश्वर भगवान् अप-
नेक प्रसन्न भेला पर कोन वस्तु अलभ्य (नहि प्राप्त होमयवला) अछि,
तखन हे देव ! अहाँक प्रति अचल भक्ति हो से बारम्बार मँडत
छी ॥२१॥

श्रीकृष्ण—(हँसि) तहिना हो (भीष्मकक प्रति बिहागरागवला गीत सँ आदेश
दँत छथि)—

गीतसं० - ३६

मजान - उदास । उपगत - उपस्थित । मन्दिर - घर में । यदु-
वल - यादवीय सेना । सुमति उमापति उकृति - पारिजातहरण

नाटककार सुमति उमापति उपाध्ययक उक्ति अछि, जे शास्त्र
कहेत अछि ।

भीष्मकः—(उत्थाय सानुनयम्) देवदेव ! दुविनीतो बालश्च मरुमारो स्वमी
मनवन्तमपि प्राकृतमिव जानाति । ततो नृपसिंहासनोपवेशनादी
नाऽऽदरमाचरति । तेन मयापि सभागृहं पथमं नोपनीतो देवदेवः ।
किन्तु आभ्यां मदनुमत्यैव सर्वमाचरितम् । अतःपरं सभागृहमेव
१६मेध्यामि ।

श्रीकृष्णः—महाराज ! किमर्थं मया तत्र गन्तव्यम् ? भवद् विलोकनादेव पूरिता
नो मनोरथाः । किन्तु यतो वयं पावतां प्राप्ताः, ततः पात्रेभ्यः
कन्यापि दीयतां, वाच्यशेषमाकर्ष्य । (पुनर्गीतेनः—)
मेरुशिखर भयं, कमलासन लय, सुरगन कएल विचार ।
भीष्म नृप तनया भय कमला अवनि लेधु अवतार ॥१६॥
ता सबो हरि परितय महि होयत, बहुत होयत सुरकाज ।
ई बुझि हमर निकट उपगत भय भाणि गेल मुनिराज ॥१७॥
से सुनि भीष्मदेव महापति, दूढ़ भय ययल बेआन ।
विश्वलोक माधव जनु पेखल, लेखल^{१०} मने नहि आन ॥१८॥

भीष्मक—(ऊठि बिनयपूर्णक) देवदेव ! अशिष्ट ओ बालक हमर पुत्र स्वमी
भगवानो केँ साधारणलोक बुझैत अछि। तेँ राजसिंहासन पर बैसब
आदि में आदर नहि करैछ । ताहि कारणेँ हमहुँ सभागृह में
देवदेव केँ नहि लय गेलहुँ । किन्तु ई दुनू कथ ओ केशिक हमरे
आजा सँ सभ किछु कयलनि अछि । एकर बाद सभागृह लय
जाबब ।

श्रीकृष्ण—महाराज ! कियेक हम ओतय जाबब ? अहाँक दर्शने सँ हमर मनो-
रथ पुरि गेल । किन्तु जेँ हम संपाव छी तेँ सत्पात्र (समुचित योग्य
व्यक्ति) केँ जेप बलव्य सुनि कन्या देल जाय । (केन गीत सँ)—

मेरुशिखर = समेहपर्वतक चोटी पर एकजित भय । कमला-
सन = अङ्गा । सुरगन = देवता । तनया = पुत्री । कमला = लक्ष्मी ।
अवनि = पृथ्वी पर । परितय = विवाह । महि = पृथ्वी पर । मुनि-

भीष्म नृपति उकुति यदुपति सजो, सुंसति रमापति भान ।
सिंह नरेन्द्र सकल अवनीपति वुस सब गुनक निधान ॥८८॥
भीष्मकः—(प्रणम्य) भगवन् ! एवमेतत् । सम्प्रति मया स्वयंवरोपि विनि-
वारितः ॥

श्रीकृष्णः—(गहड़ प्रति जनान्तिक्कम्) खगेन्द्र ! स्वयंवर-विधत्नात् प्रकुपिता
जरासन्धादयो माधुरैरवध्य कालयवनं पुनरुक्त्य मधुरोपरोधं करि-
ष्यन्ति । तेन मद्वचनात् समुद्र-सकाशात् स्थलमुपगृह्य भवतां
पक्षवातेन जलं प्रक्षिप्य विश्वकर्माणमाहूय, तत्र सकल-यादवगण-
सन्निवेशयोग्या द्वारवती नाम्नी नगरी द्रुतं विशेषा । अन्यच्च
रुक्मिण्या हरणाधसरे भवता साहाय्यमाचरणीयम् ।

गहड़ः—देवदेव ! सन्निवेशमया सम्पादनीयम् । (इति निष्क्रान्तः) ।

भीष्मकः—(स्वयंवरार्थमागतान् नृपान् प्रति २२-सप्रणम्य) —
गहड़श्च भूमिपाला तव-विनययुताः स्वैरनीकेः समेताः

राज = नारद । दृढ़ = स्थिर । विश्वरूप = संसारक स्वरूप । तनु =
देह । भीष्मनृपति उकुति = भीष्मक-राजा उक्ति । अवनीपति =
पृथ्वीपति, राजा ॥

भीष्मकः—(प्रणाम कय) भगवन् ! ई एहिना अछि । एखन हम स्वयंवरके
रोकैत छी ।

श्रीकृष्णः—(गहड़क प्रति कनकुसकी कय) पक्षिराज ! स्वयंवरक भाग सौ तम-
सायल जरासन्ध आदि, मधुराक धीर सौ अवध्य कालयवन के आगू
कय मधुरा मे उपद्रव करैत । ते हमरावचन सौ समुद्रक समीप सौ
अहाँ स्थल (भू भाग) लय पाँजिक हवा सौ जल फेकि, विश्वकर्मा
के बजाय ओतय सभा यादवक निवास योग्य द्वारवती नामक
नगरी सटय बनबाज । दोसरो बात जे रुक्मिणीक हरणक समयमे
अहाँ सहायता करी ।

गहड़—देवदेव ! ई सभकिछु हम करब । (बहार भय गेलाह ।)

भीष्मकः—(स्वयंवरक हेतु आयल राजासभक प्रति धिनयपूर्वक) —

हे नीति ओ विनययुक्त राजालोकनि ! अहाँसभ अपन सेनासहित

नेदनीं गदसुतायाः २३-परिवरणमतो राजधानीं स्वकीयाम् ।

अत्ययव्यापराधो मम गतवसः शीलवद्भिर्भवेद्भिः

मक्षिहं नम्रमौलिः कुतनयवस्यो नो विधेयः प्रकोपः ॥२३॥

(रजानः श्रीकृष्णं प्रणम्य तथाऽऽचरन्ति)

भीष्मकः—देवदेव ! सम्प्रत्यनुजानीहि मां स्वपुरगमनाय । किन्तु मधुरासुप-
गते वार्तोपलब्धिः कथं स्यात् ?

श्रीकृष्णः—देवपिरागत्य सर्वं कथयिष्यति । महाराज कैशिक ! वयमपि
सम्प्रति मधुरामेव यास्यामः ।

(उभौ श्रीकृष्णमनुनीय प्रणम्य च प्रतिनिवृत्तौ)

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

॥ इति रुक्मिणीपरिणये श्रीकृष्णस्य राजेन्द्राभिषेक-

स्वयंवरविघटनको नाम चतुर्थोऽङ्कः ॥

जाइ जाइ । एखन हमर पुत्रीक विवाह नहि होयत, अतः अपन राज-
धानी जाइ ओ बृद्ध-हमर एहि अपराधके सदाचारी अहाँ लोकनि क्षमा
करी । हम साथ भुकाव याचना करैत छी जे हमर कुपुत्रक द्वारा
कयल अपराध पर क्रोध जनु करी ॥२३॥

(राजासभ श्रीकृष्णके प्रणाम कय ओहिना करैत छथि ।)

भीष्मकः—देवदेव ! एखन हमरा अपन नगर अयवाक आज्ञा दिथ । किन्तु अत-
नेक मधुरा पहुँचला पर समाचार कोना प्राप्त होयत ?

श्रीकृष्णः—देववि नारद आबि सभाटा कहताह । महाराज कैशिक ! हमरो
लोकनि एखन मधुरे जायव ।

(दुनू राजा श्रीकृष्णक प्रार्थना ओ प्रणाम कय घुरि गेलाह ।)

(सभ बहार भय गेल ।)

॥ रुक्मिणीपरिणय मे श्रीकृष्णक राजेन्द्राभिषेक ओ
स्वयंवरविघटन नामक चतुर्थ अङ्क समाप्त ॥

अथ पञ्चमोऽङ्कः

(तत्र प्रविशत्याकाश-यानेन नारदः । तत्र गीतम्—)

[गीतसं०—३७]

सुरमुनिराज मनोहर भेष । ब्रह्म-तनय नारद परवेश ॥
शुभ्र तिलक उपवीत कुक्कुल । श्रुति-पुस्तक जपमाल अमूल ॥
वण्ड कमण्डल मण्डित हाथ । कपिल जटाचय शोभित माथ ॥
ब्रह्म-सैजे तसु मलिन दिनेस । योग जुगुति जनि दोसर महेश ॥
हरिक पठाओल भीषम-ठाम । उपगत मुनिवर कृष्णन ग्राम ॥
कहूधि रमापति नारद-रूप । रस कुक्षु रसमय मैथिल भूप ॥

राजा—(प्रविश्य, नारदागमनं प्रकाशाधिक्याद् विलम्बं द्वात्रिंशद् बहिर्गत्वा प्रणम्य, पुरस्कृत्याऽऽनीय, अत्यादरेण अतिथि-सत्कारं विधातुं) भगवन् ! वयमश्च कुतार्था धन्याश्च पुष्पाकमागमन-प्रसादात् ।

पञ्चम अङ्क

(तत्रन आकाशमार्गं सौ नारद प्रवेश करेत छधि । ताहि मे गीत—)

गीत सं०—३७

सुरमुनिराज = देवताक मुनि मे राजा, नारद । ब्रह्मतनय = ब्रह्माक पुत्र । शुभ्र = स्वच्छ । उपवीत = जनेउ । कुक्कुल = वस्त्र । श्रुति पुस्तक = वेदक पोथी । अमूल = अमूल्य । कपिल = भूकल । दिनेश = सूर्य । योग जुगुति = योगाभ्यास सौ । महेश = महादेव भीषम-ठाम = भीष्मक ओहिठाम । उपगत = आयल ॥

राजा—(प्रवेश कय, अधिक प्रकाश भेलासौ नारदक आगमनक तर्क कय द्वार सौ बाहर जाय प्रणाम कय, आगू कयके आमि अध्वन्त आदर सौ अतिथि-सत्कार कय) भगवन् ! हमरालोकनि आइ अपनेक आगमनक प्रसाद सौ सकल ओ धन्य छी ।

नारदः—(शुभाक्षीयो वस्त्रा) राजन् । न खलु विस्तर-शिष्टाचारस्त्वैव समयः ।

राजा—(उपविश्य सविनयम्) कथयन्तु तपोनिधिरागमन-प्रयोजनम् ।

नारदः—सम्प्रति द्वारकासौ भगवता वासुदेवेनाऽहमत्र प्रेषितः ।

राजा—कुत्र सा द्वारका नगरी ?

नारदः—पश्चिम-समुद्र-प्रोपकण्ठे गरुडद्वारा समाजस्यो विश्वकर्मा काञ्चन-

मयीं तां पुरीं चकार ।

राजा—किं तत्र भगवान् सम्प्राप्तः ?

नारदः—राजन् । विदर्भनगरे श्रीकृष्णस्य राजेन्द्राभिषेकवृत्तान्तं सर्वमेव निशम्य जरासन्धप्रभृतयः शङ्किताः सभयाश्च बभूवुः । ततो रविमणा सह सम्मन्त्र्य माथुरैरवश्यं कालयवन पुरस्कृत्य मथुरोपरोधं कृतवन्तः ।

राजा—ततस्ततः ?

नारदः—(शुभाक्षीर्वाद वयं) राजन् एखन विशेष शिष्टाचारक ई समय नहि थिक ।

राजा—(बैसि दिनयपूर्वक) कहल जाओ तपस्वारूप बनवाला अपने अवका प्रयोजन ।

नारदः—एखन द्वारका सौ भगवान् कृष्णक द्वारा हम एतय पठाओ छी ।

राजा—कतय अछि ओ द्वारका नगरी ?

नारदः—पश्चिम-समुद्रक सट पर गरुडक द्वारा आज्ञा आबि विश्वकर्मा स्वर्णमयी ओहि नगरीक निर्माण कयल ।

राजा—की ओतय भगवान् पहुँचि गेलाह ?

नारदः—राजन् । विदर्भनगरमे श्रीकृष्णक राजेन्द्राभिषेक होयबाक समाचार सभ मुनि जरासन्ध इत्यादि शङ्कित ओ भयभीत भय गेल अछि । ते सबसँ संग परामर्श कय मथुरावासी सौ अवश्य (नहि मारल जय-वाक योग्य) कालयवन के आगू कय मथुरा पर आक्रमण कयलक ।

राजा—तत्रन ?

नारदः—श्रीकृष्णोऽपि प्रागेव यादवान् द्वारवतीं प्रेष्य स्वयं कालयवनं दर्शयित्वा प्रपलाय्य एकाकिनमनुवाक्यं कालयवनं मुचकुन्द-नृपस्य नेत्राग्निना भस्मासाद् विधाय द्वारवतीं गतः । तत्र च मामनुमृत्य श्रीकृष्णो नीक्तं यथाशीघ्रं त्वया कुण्डनं गत्वा भीष्मकाय वाच्यः, स्वमिणा सह विधायं करोतु शिशुपालार्थमेव विवाहोद्योगम् । तत एवाऽभिमतसिद्धिं भविष्यतीति ।

राजा—सर्वार्थं कुमारमाहूय तथा कियसे ।

नारदः—अहमपि स्वमिणा वृत्तं कन्याभयनात् प्रच्छन्न एवोपलभ्य यास्यामि ।
(इति निष्क्रान्तः ।)

॥ इति विष्कम्भकः ॥

नारदः—श्रीकृष्णो गहिनहि वायव्यसभके द्वारका पठाय स्वयं कालयवनक सोभां होइत पड़ाय एकसरे दीइत कालयवन के मुचकुन्द-राजाक आँखिक आगि सँ भस्म कराय द्वारका गेलाह । आ ओतम-हमरा बजाय श्रीकृष्ण कहलनि जे यथाशीघ्र अहाँ कुण्डनपुर जाय राजा भीष्मक के कहियनु जे स्वमीक संग विधारि करधु शिशुपालक हेतु विवाहक उद्योग । ताही सँ अभीष्ट सिद्धि होयत ।

राजा—सबतरहेँ कुमारकेँ बजाय तहिना करैत छी ।

नारदः—हमहूँ स्वमिणीक हालचाल कन्याभवन सँ नुकायकेँ प्राप्तकय जायव ।
(प्रस्थान कय देलनि ।)

विष्कम्भक समाप्त ।

[वृत्तवर्तिष्ठमानानां कथांशानां निदर्शकः ।

विष्कम्भोऽङ्गुष्ठमस्यान्ते पातोऽङ्गुस्थोऽविभागतः ॥

बीतल वा आगामी कथांशकेँ सूचित करयवला दृश्य केँ विष्कम्भक कहल जाइछ जे दुइ अङ्गक बीच से अङ्गसँ मिलल अप्पक् रहैछ । अर्थात् ई नाटकक आदि वा अन्त से नहि भय सकैछ । ई कथावस्तुकेँ परिपूर्ण ओ सम्बद्ध करैछ । (दशरूपक) ।]

राजा—नयसागर ! आहूयतां कुमारः ।

(कञ्चुकी तथा करोति । ततः प्रविशति स्वमी)

स्वमी—महाराज ! कथमाहूतोऽस्मि ?

राजा—कुमार ! अतः मया, श्रीकृष्णः प्रपलाय्य द्वारवतीं गतः । तेन चेदिनृपमा-नीय कियतां भगिन्या विवाहोद्योगः ।

स्वमी—(सहर्षमुत्थाय) मयाऽपि कलहवर्धनस्तत्र प्रेषितः ।

राजा—सम्पत् कृतम् । नयसागर ! देव्यै वक्तव्यं करोतु देवो सम्भारानिति ।
(कञ्चुकी तथा करोति । देवी च सोढेनं तथा कृतवती ।)

(ततः प्रविशत्युपविष्टा सखीद्वय-सहिता स्वमिणी)

स्वमिणी—सखि सुदक्षिणे ! कथं मथुरा-नगरं गतो माहवो ?

[सखि सुदक्षिणे ! कथं मथुरा-नगरं गतो माधवः ?]

सुदक्षिणा—अथ इ ? तवो विदुआरवदिश गतो । [अथ किम् ? ततोऽपि द्वार-वती गतः ।]

राजा—नयसागर ! कुमारकेँ बजाव ।

(कञ्चुकी तहिना करैत अछि । तखन स्वमी प्रवेश करैत छथि ।)

स्वमी—महाराज ! कियेक बजाबल अछि ?

राजा—कुमार ! हम सुनल अछि, श्रीकृष्ण पड़ाय द्वारका गेलाह । तेँ चेदि-राज शिशुपालकेँ आनि करु बहिनिक विवाहक उद्योग ।

स्वमी—(सहर्ष अछि) हमहूँ कलहवर्धन केँ ओतय पठाबाने छी ।

राजा—नीक कयलहुँ । नयसागर ! महाशमीकेँ कहियनु जे ओ ओरिधान करथि ।

(कञ्चुकी तहिना करैछ । देवी उद्योग सहित तहिना कयलनि ।)

(तखन दुइ सखी सहित बैसलि स्वमिणी प्रवेश करैत छथि ।)

स्वमिणी—सखि सुदक्षिणे ! की मथुरा-नगर गेलाह माधव ?

सुदक्षिणा—त आओर की ? ओनहुँ सँ द्वारका गेलाह ।

१—दूरपदि—क; द्वारवति—ख ।

रविमणी - सहि ! कथेहि पुनो बि आञ्जमिरसदि ? [सखि कथय पुनरपि आग-
मिष्यति ?]

सुदक्षिणा - रसहि ! जइ दे देवस अण्कलदा भविससदि, तुभं उण कुदो जुवाव-
त्पादो पडिहीअसि ? [सखि ! यदि ते देवस्य अनुकूलता भविष्यति,
तर्हि पुनः कुतो युवावस्थातः पतिहीयसे ?]

(रविमणी सलज्जमघोमुखी तिष्ठति ।)

सुशोभना * (मुखमुजमध्य*) सहे ! अहारिसीसु* का एत्थ लज्जा ? ता
कहेउ* पियसही । [सखि ! अस्माद्शीघ्रं काऽथ लज्जा ? तत् कथ-
यतु प्रियसखी ।]

रविमणी—(गीतेनऽऽवेदयति)—

[गीतसं०—३८]

माधव - गमन दिवस सजो, सजनी

मोहि होअ जहिन विषाद ।

जतनहु कह्य न* पाखिअ*, सजनी

छने छने* तनु अवसाद ॥

रविमणी - सखि ! कहू केर अओताह ?

सुदक्षिणा - सखि ! जे अहाँ पर देवकीकृष्णक अनुकूलता होयत तें अहाँ की
कोनो युवावस्था सँ हीन भय रहलि छी ?

(रविमणी लजायलि नीचां मुहें रहैत छथि ।)

सुशोभना - (हुनक मुँह उठाव) सखि ! हमरालोकनिक सन लोकक लग कोन
लाज ? तें कहू प्रियसखी ।

रविमणी * (गीतक द्वारा जनवैत छथि) —

[गीतसं० - ३८]

माधव-गमन-दिवस = श्रीकृष्ण जहिमा सँ गेलाह अछि ताहि दिन
सँ । जहिन = जेहन । विषाद = दुःख । तनु अवसाद = देह समाप्त

१-०-क (ई पंक्ति नहि अछि) । २-मुनस्य-ख । ४-अहारिषी मुका-

ख । २-कथेहु-ख । ६-जे-क । ७-पाखिअ-ख । ८-छने
छने-क ।

अमिअ किरन शशि सुनिअ, सजनी

सेहओ बरिस विषभार ।

दछिन* पवन तह तनु वह, सजनी

मलयज परस अङ्गार ॥

अमर-निकर-रवे मण्डित, सजनी

मुकुलित देखि सहकार ।

सुरछि खमिअ महिमण्डल, सजनी

बितु कारने कति नार ॥

कोकिल कल धुनि सुनि सुनि, सजनी

मन हअ अधिक उदास ।

केवल जीवन राखिअ सजनी

पुन तसु दरसन आस ॥

तुअ - पुण - सिन्धु - मगन हरि, सजनी

एहन करिअ अवधान ।

अचिरे आओत यदुनायक, सजनी

सुमति रमापति मान ॥

सुशोभना - महि सुदक्षिणे ! अखरिअ* पियसहीए अकारण परोक्षानुराग
जदो एकां मन्तरेदि ॥ [सखि सुदक्षिणे ! आश्चर्य प्रियसख्या
आकारण - परोक्षाऽनुरागो, यत एकां मन्त्रयति ।]

भेल जाइख । अमिअ = अमृत युक्त किरणवला चन्द्रमा । तह = सँ ।

वह = बरैत अछि । मलयज = श्रीकृष्ण चन्दनक स्पर्श । अमर =

भौराक समूहक मुकुटन सँ शोभित । मुकुलित = मञ्जरीयुक्त ।

सहकार = आमक गाछ । महिमण्डल = पृथ्वी पर । कल = कुहकब ।

तसु = माधवक । तुअ = हरि = अहाँक समुद्र सन विशाल गुण

पर श्रीकृष्ण मुख छथि । एह = ई । अवधान = ज्ञान । अचिरे =

शीघ्र । यदुनायक = श्रीकृष्ण ।]

सुशोभना सखि सुदक्षिणे ! आश्चर्य धिक प्रियसखीक बितु वारणक परोक्ष-
अनुराग बिधे तें एहि प्रकारें विवारेत छथि ।

१-रविन-ख । १-अखरिअ-क ख । ११-वेधि-ख ।

सुदक्षिणा - सहि १२. १३. अचरिअ १३ एद. जदो -

[सखि ! न खलु आश्चर्यमिदं, यतः] (गीतेन) -

[गीतसं०-३६]

सुनिअ विदुधि सखि । तेजि सन्देहे ।

पुरुष सुकुते गुने उपज मिनेहे ॥

कारन - रहित परम अभिरामे ।

सज्जन मिनेष्टु देखिय कत ठामे ॥

१४ससि - मनि दरव कलानिधि देखी ।

हरप चकोर - नयन तन्हि देखी ॥

कमल कुमुद दुहु सलिल निवासे ।

रवि शशि दूर, करवि परमासे ॥

चातक तेजधि सरोवर - नीरे ।

घन-जल बिन्दु पोषि रह श्रीरे ॥

सुमति रमापति भन वरमाने ।

मानस-प्रेम हेतु के जाने ॥

सुक्षिणा - सखि ! ई आश्चर्यक विषय नहि थिका, कियेक ते - (गीतक द्वारा) -

[गीत सं० - ३६]

विदुधि = बुद्धिआरि । तेजि = छोड़ि । पुरुष सुकुते = पहिलुका पुण्य

सं । अभिरामे = सुन्दर । ससि मनि दरव = चन्द्रकान्त मणि पथि-

लेछ । कलानिधि = चन्द्रमाके । हरप = प्रसन्न होइछ । चकोर-

नयन = चकोर पक्षीक आंखि । तन्हि = चन्द्रमाके । देखी = देखि ।

कमल - परमासे = पानि मे रहनिहार कमल ओ कुमुद फूलके

दूरहु रहला पर कमलः सूर्य ओ चन्द्र प्रकाशित कय बैत छथि ।

चातक = चकवा पक्षी । तेजधि = त्याग करैत अछि । सरोवरनीरे

= पोखरिमे पानि । घन-जल बिन्दु = मेघक पानिक बिन्दु । मानस-

प्रेम हेतु = मानसिक प्रेमक कारण ॥

१२ - जं - ख । १३ - अचरिअ - क ख । १४ - सखि - ख ।

देवी - (प्रविश्य) अइ सुदक्षिणे ! अज्ज मए अधिअवरं रविमणीए उब्बेअ-
कारणं सुदं । तथो तुम्हाणं पिअसहि दटुं १४ समागदा । [अयि सुद-
क्षिणे ! अय मया अधिकतरं रविमण्या उद्देग-कारणं श्रुतम् । ततो
युष्माकं त्रियंसखीं दटुं समागता ।]

सखी - देह ! कि दाव अधिशं । [देवि ! कि तावदधिकम् ।]

देवी - (वदन्ती १५ गीतेनावेश्यति) -

[गीत सं० - ४०]

हरिक गमन सुनि, कुदिवस मने गुनि, जे मोहि भेल अनुतापे ।

नृप - दमघोष - तनय वर आओत, से सुनि दोगुन सन्तापे ॥

ओ री साजनि ! तोरित करिअ से १७ काजे ।

त्रिभुवन - सन्दर अबनि - पुरन्दर, पुन आवधि यदुराजे ॥ १८ ॥

अहिनि सुनिअ मोरि, तन्हिनि दुलहि मोरि, जलधि-सुता अवतारे ।

गहत तनिक १९ कर, असुर - अंस वर, करब कओन १६ परकारे ॥

धरज धरिअ मनोरथ पूरत, राति करिअ अनुमाने ।

केसरि - भाग २० पाव नहि जम्बुक, सुमति रमापति भामे ॥

देवी - (प्रवेश कय) अइ सुदक्षिणे ! आइ हम रविमणीक अधिक उद्दिग्न होयब
सुनलहु अछि । ते तोहरालोकनिक सजीके देखब आइलि छी ।

दुह सखी - महारानी ! अधिक की कहू ।

देवी - (कर्त गीतक द्वारा आशय प्रकट करैत छथि -)

[गीतसं० - ४०]

कुदिवस = अथलाह दिन । अनुतापे = दुःख । नृप-दमघोष तनय = राजा

दमघोषक पुत्र शिशुपाल । अबनि-पुरन्दर = पृथ्वी पर इन्द्र स्वरूप । यदु-

राजे = श्रीकृष्ण । मोरि = गौरी । जलधि सुता = समुद्रपुत्री लक्ष्मीक

अवतार । असुर = राक्षस । केसरि भाग = सिंहक भाग्य के । जम्बुक

= मोरह ।

१४ - वहु - ख । १५ - रोवमाना - क ख । १७ - ० ख । १८ - तन्हिक - ख ।

१९ - कोने - ख । २० - भाग भाग पाव - ख ।

(रविमणी आकर्ष्य मूर्च्छिता भूमौ पवाते ।)

देवी—अह सुदक्षिणे ! एतत् दाणिं को उवाचो ? सुसोहणे ! तुमं सीअलोव-
आरेहिं पिअसहिं उवअर । [अयि सुदक्षिणे ! अज्जेदानीं क उपायः ?
सुसोभने ! एवं सीतलोपचारैः प्रियसखीम् उवचर ।]

(सखी तथा कुतः । रविमणी तथापि संज्ञां न लभते ।)

देवी—ण मए मन्दभाइणीए एत्थ अवत्थादत्थं । [न मया मन्दभागिन्या
अत्र अवस्थातव्यम् ।] (इति निष्क्रान्ता) ।

सखी—(गीतेनऽऽकन्दयतः)—

[गीतसं०—४१]

चेतिअ नृपति - कुमारी । सखि आहे ॥ अ० ॥

२१वचन सुनिअ अवधारी ॥

सतत कहिअ सबे जाने । सखि मोरि प्राण-समाने ॥

बिनु दोषे तेजिअ ताही । एहन कुबुधि होअ काही ॥

मोरि जिव कुलिश - उपाये । एहुवत न तेजव ठामे ॥

(रविमणी सुनि मूर्च्छित भय पृथ्वी पर लसलोहि ।)

देवी—हए सुदक्षिणे ! एतत् आव कोन उपाय अछि ? सुसोभने ! तौ ठंडा उप-
चार सभ सौं प्रियसखीक सेवा करहु ।

(बुहु सखी तहिना करैत छथि । रविमणी तैयो होअ मे नहि अवैत
छथि ।)

देवी—अभागलि हम आव एतय तहि रहि सकैत छी । (बहार भय गेलीहि ।)

बुहु सखी—(गीतक द्वारा कनैत छथि)—

[गीतसं०—४१]

चेतिअ - ज्ञान कळ । नृपति-कुमारी - राजकुमारी । अवधारी -

निचारि । सतत - हरदम । तेजिअ - छोड़ैत छी । जिव - जीवत ।

विहि = विरचिअ परकारे । विभुवन होयत असारे ॥

सुमति रमापति गावे । धैरजे सबे फल पावे ॥

रविमणी—(चिरेणाऽवलोकय) हला सुदक्षिणे ! कथं मन्दभाइणि जीविअ^{२२}

एहुं सम्भावैसि मं ? हला सुसोहणे ! कि दाणिं सीअलोवआरेहिं ?

जदो, [अयि सुदक्षिणे ! कथं मन्दभागिनीं जीवितां सम्भावयसि

माम् ? अयि सुसोभने ! किमिदानीं सीतलोपचारैः यतः ।] (संस्कृ

तमाश्रित्य दलोकन)—

जलार्द्रया^{२३} किं, तलिनी - दलेन किं

श्रीखण्ड - कर्पूर - रजश्चयेन किम् ?

आकर्णितं केन विलोकितं वा

हृद्-रोग - शान्तिः कश्मार्जनेन ॥ २४ ॥

सखी—(सान्त्वय) सहि ! एव्वां करेम्हु । [सखि ! एवं कुर्वीः ।] (इति

तलिनी-दल चन्दनादिकमपसारयति ।) पिअसहि ! कथोहि सरीराव-

त्थं । [प्रियसखि ! कथय शरीरावस्थाम् ।]

कुलिश उपाये - वञ्चक समान । विहि-विरचिअ - विघाताक यना-
ओल । असारे - निस्तत्त्व ।

रविमणी—(बड़ी काल पर देखि) हए सुदक्षिण कियेक एहि अभागलि के

जीवित देखवाक सम्भावना करैत छहु ? हए सुसोभने ! एहन

एहि सीतल उपचार सौं की होयतहु ? कियेक तैं—

जल सौं भीजल मंखे सौं की, पुरइतिक पात सौं की, ओ श्री-
खण्ड तथा कर्पूरक सत्त्वक डेर सौं की भय सकैछ ? ई कयो सुनलक
वा देखलक अछि जे हृदय रोगक शान्ति हाथ सौं पोछला सौं
होइछ ? ॥ २४ ॥

बुहु सखी—(आनन्दपूर्वक) सखि ! सब टा करब । (पुरइतिक पात, चानन
आदि हटवैत छथि ।) प्रियसखि ! कहू शरीरक अवस्था ।

रविमणी—विसामेहि विअसहि । [निशामय प्रियसखि ।] (पुन गीतेन वदति)—
[गीत सं—४२]

सुनिअ सुचेतन सज्जनि, करिअ उपमय विचारि ।
कुकरम परम हमर जनि, ते तेजि मेल मुरारि ॥
आ २२^{२४}भाधु २॥

नलिति सयन, मलयज रज, परसे^{२४} उपगत ताप ।
सुरभि-रजनि पूरन-शशि देखि^{२५} अधिक हिअ काप ।
सज्जन विकल सति विक रथ, कि करव हमे परकार ।
निरदय भय हिरदय हन, पचसर सर^{२६} दुरवार ॥
न मिलत यदि एहि^{२७} अवसर, माधव माधव मास ।
तजो हम जीव धरव सखि, एहत करिअ जनु आस ॥
अचिरे^{२८} पुरत तुअ अभिमत, होएत कुदिन अवसान ।
गुन बुझि मधुरिपु आओत, तुमति रमाति भान ॥
(इत्यधियाय पिकरुतमाकर्ण्य पुन मुं चछति ।)

रविमणी—सुनह प्रियसखी । (फेर गीतक द्वारा कहैत छथि)—

[गीत सं—४२]

सुचेतन = ध्यान से । नलिति शयन = पुरहितक पातक ओछान । मलयज रज = श्लोखवक गर्दी । परसे = स्पर्श से । सुरभि रजनि = वसन्त ऋतुक राति । पूरन शशि = पूर्णिमाक चन्द्रमा । हिअ = हृदय । सज्जन = कान्ता । विक रथ = कोइलीक शब्द । हन = मारेत अछि । पचसर = कामदेव । सर = साण । दुरवार = रोकल जएवा-योग्य नहि । माधव = कृष्ण । माधव शेषाखा । अचिरे = शीघ्र । अभिमत = अभिलाषा । अवसान = अन्त । मधुरिपु = कृष्ण ॥

(ई कहि कोइलिक कुहकव सुनि फेर मूच्छित होइत छथि ।)

२४ - ० = क । २५ - उपगत सन अनुताप - क । २६ - देखिअ - ख । २७ -

० - ख । २८ = सुअवसर - क ख ।

सशोभना—सहि सदविषय ! अरिथ^{२९} दाणि कोवि उवाओ ? [सखि सुद-
क्षिणे ! अस्तीदानी कोऽनुपाय ?]

सुदक्षिणा—सुदं मए महाराज-समीप देवदसी नारदो उवगदोसि । तदो^{३०}
तस्स^{३१} तपोवलेन कोवि पदोआरो एत्थ भविस्सदि तदो अण्णे-
हसेमि मुणी तरं तुसं दाव भट्ठिआरिअ उवअर । [अतं मया महा-
राज-समीपं देवपि नहि उपगतोऽस्ति । ततः तस्म तपोवलेन
कोऽपि प्रतीकारोऽज भविष्यति । ततोऽन्विष्यामि मुनीश्वरं, एवं
तावद् भर्तृदारिकामुपधर ।]

सुशोभना—भद । [भद्रम् ।]

सुदक्षिणा - (निष्क्रम्य द्वाराद् बहिः आकाशे) अए मुणीसर नारद । [अये
मुनीश्वर नारद !] (इति अत्युत्तमं जगद ।)

नारद - (प्रविश्य तपोधम्) कुत्राऽस्ति नारद ? काऽसि एवं, कथं वा त्वम्
एवम् आह्वयसि ?

सुदक्षिणा अज्ज ! भट्ठिआरिए रुक्किणीए सही सुदक्षिणा भिह^{३२} । षणमामि
अज्ज । [आर्य ! भर्तृदारिकामा रविमण्याः सखी सुदक्षिणाऽस्मि ।
प्रणमामि आर्यम् ।]

सुशोभना—सखि सुदक्षिणे ! एहन कोनो उपाय अछि ?

सुदक्षिणा—हम सुनलहुँ अछि जे महाराजक लग देवपि नारद भयलाह अछि ।
तं हुक तपोवल से कोनो प्रतिकार एतय होयत ।^{३३} मुनीश्वर
नारदके तकैत छी । तो तावत् कुमारीके उपाचार करह ।

सुशोभना—बड़ दीय ।

सुदक्षिणा—(बहार भय द्वारहीं बाहर आकाश दिस) अओ मुनीश्वर नारद !
(ओरमं चिकरलीहि ।)

नारद - (प्रवेश कय कोषपूर्वक) कहाँ छथि नारद ? के धिकहु तो, कियेक
एना सोर करैत छहु ?

सुदक्षिणा - आर्य ! राजकुमारी रविमणीक सखी सुदक्षिणा छी हम । आर्यके
प्रणाम करैत छी ।

२९ - आये - क, अरथ - ख । ३० - ततः - क ख । ३१ - तस्स - ख ।

३२ - नलि - ख ।

नारदः—रुक्मिण्याः प्रसादभाजनं^{३३} भव । अमुना मार्गेण गतो देवविः ।

(सुदक्षिणा अभ्यतो गत्वा तथैव जगद । पुनः किञ्चिदाकार—गोपनं कृत्वा स एव मिलितस्तथेकोत्तरं दत्तवान् । एवं कतिवारं^{३४} तयोराभाषणं बृहत् । ततो^{३५} लक्षणैः संलक्ष्य पादयोः पयात् ।)

सुदक्षिणा—मए लक्षणेहि विष्णाव तुमज्जेव सो देवदसिति^{३६} ।

[मया लक्षणैः विज्ञातं, त्वमेव स देवविरिति ।]

नारदः—(वण्डमुद्यम्य) अयि ! मुञ्च, मुञ्च । बुद्धस्य मे विप्रस्य कथं तपो-विधनमाचरसि ? नो चेद् दण्डेन ताडयामि शपेन वा ।

सुदक्षिणा—नस्थि मे सम्पदं जीविदासा पिअसहीए दुक्खपडीआरो^{३७} जाव ण भोदि । [नास्ति मे साम्प्रतं जीविताशा प्रियसख्या, दुःखप्रती-कारो यावन्न भवति ।] (इति गाढं करणी धृतवती ।)

नारदः—(उच्चैः विहस्य) साधु साधु, यथाथंतापयेया सर्वं तप्य-कुशलाऽस्ति त्वम् । स एवाहं मुनिः । कथय प्रयोजनम् ।

नारदः—रुक्मिणीक कृपापात्र होअह । एही वाटे^{३८} देवपि गेलाह ।

(सुदक्षिणा आन ठाम जाय ओहिना बाजलि । फेर किछु रूप छपाय ओएह भेरलथिन ओ ओहिना उत्तर देलथिन। एहिना कइयैक बेर दुह्र मोटा मे गव्य भेल । तखन लक्षणसँ चिन्हि पएर पर खसलि ।)

सुदक्षिणा—हम लक्षण सँ बुझलहुँ, अहीँ ओ देवपि थिकहुँ ।

नारद—(लाठी उठाहि) हए ! छोड़ह, छोड़ह । हमरा बुद्ध ब्राह्मणके तपस्या मे बिपन्न कियेक करैत छह ? नहि त लाठी स पिटबहु वा थाप देबहु ।

सुदक्षिणा—एखन हमर सखीक जीवनक आशा नहि अछि यावत् दुखक प्रती-कार नहि होइछ । (कसिके पएर गहि लेछ ।)

नारद—(जोर सँ हँसि) आह, वाह । अर्थक अनुसूते नामवाली सभकाज मे पटु छह तँ । हम ओएह मुनि छी । कहह प्रयोजन ।

३३ - जना—ख । ३४ - चारानयो - ख । ३५ - ००० सँ ।

३६ - ईसिति - ख । ३७ - पवीआरं - ख ।

सुदक्षिणा—संपदं जीविद-संसजं णो पिअसही संपत्ता । तसो नस्थि वाणि परि-हासस^{३९} समओ । ता तत्थ गदुअ^{४०} पिअसहीए जीविद-प-डीआरं^{४१} करेदु अज्जो । [साम्प्रतं जीवितसंशयं नः प्रियसखी सम्प्राप्ता । ततो नास्ति इदानीं परिहासस्य समयः । तत् तत्र गत्वा प्रियसख्याः जीवितप्रतीकारं करोत्वार्थः ।]

(नारदः तया सह कथाभवनं प्रविश्य कमण्डलु-जलेन रुक्मिणी-मन्थिपिच्छति । पुष्पादिकं क्षिपति । रुक्मिणी शंकां लक्ष्म्या उप-विश्याऽवलोकयति ।)

रुक्मिणी—(जनास्तिकम्) सहि । को एसो विअवरो ? [सखि ! क एव हिज-वरः ?]

सुदक्षिणा—सहि । एसो ज्जेव मुणीसरो नारदो निरिक्खं^{४२} शिअ आणेदुं सम-त्थो, [सखि ! एव एव मुनीश्वरो नारदः श्रीकृष्णं वीक्षमानेत्तुं समर्थः ।]

(रुक्मिणी सहर्षमुत्थाय पुनः पुनः प्रणम्य स्वहस्तेनैव पादौ

सुदक्षिणा—एखन हमर सखीक प्राण सम्बेह मे पड़ि गेल अछि । तँ एखन हँसीक समय नहि अछि । अतः ओतय जाय प्रियसखीक जीवाक उपाय करबु आर्य ।

(नारद हुनक संग कथाभवनमे प्रवेश करि कमण्डलक जल सँ रुक्मिणी केँ सिकत करैत छथि । फूल आदि फेकैत छथि । रुक्मिणी होश मे आवि बैसिकेँ तर्कैत छथि ।)

रुक्मिणी—(जनफुसकी कय) सखि ! ई ब्राह्मणअष्ट के थिकाह ?

सुदक्षिणा—सखि ! इयेह मुनीश्वर नारद श्रीकृष्णकेँ वीक्ष अनया मे समर्थ छथि ।

(रुक्मिणी सहर्ष ऊठि बारं बार प्रणम्य कय अपनहि हाथेँ

३९ - पवीआरं - ख । ४० - गदुअ - ख । ४१ - पवीआरं - ख ।

प्रक्षाल्य तज्जलं शिरसि यथाति । अत्यादरेणातिविस्तकारं कृत-
वती ।)

नारदः—राजपुत्रि ! मनोरथ-सिद्धिं द्रुतं तवाप्नुतु । तवादरेणातिपुष्टोऽ-
स्मि । किं वा तव प्रियमर्थं मया सम्पादनीयम् ?

(रविमणी सलज्जमधोमुखी तिष्ठति ।)

नारदः—(विहस्य) प्रच्छन्नेन मया सर्वमेव श्रुतम् । (इति तदुक्तं गीतादिकं
पठति ।)

(रविमणी अतीव लज्जते)

सुदर्शिना—(मुखमुन्नमय्य) पिअसहि ! का एत्थ तपोधने लज्जा ? एदेव
सक्को जाणिये जेजेव । ता कवेदु िअमही । कज्जसिद्धी सत्ति भोदु।
[प्रियसखि ! काऽयं तपोधने लज्जा ? एतेन सर्वं ज्ञातमेव । तत्
कथयतु प्रियसखी । कार्यसिद्धिं कीदृति भवतु ।]

रविमणी—सुणोदु अज्जो । [शृणोतवार्ताः ।] (गीतेनायेदमति)—

दुनू एएर पसारि, ओ जल मयि पर लेत छथि । अत्यन्त आदर
है अतिवि-स्तकार करैत छथि ।)

नारदः—राजपुत्री ! अहाँक मनोरथ शीघ्र सिद्ध हो । अहाँक अदर से
अत्यन्त सम्बुष्ट छी । आब की अहाँक प्रियकार्य हम करी ?

(रविमणी लज्जापलि नीचांमुखे छथि ।)

नारदः—(हँसि) नुकायके हम सबकिछु सुनलहुँ । (हुनक कहल गीत आवि
पढ़ैत छथि ।)

(रविमणी अत्यन्त लजाहत छथि ।)

सुदर्शिना—(हुनक मुह उठाय) प्रियसखि ! एहि तपस्वीक लग कोन काज ?
हैं तैं सबटा बुझनहि छथि । तैं कहियनु प्रियसखी । कार्यसिद्धि
भटयय हो ।

रविमणी—सुनल जाओ आर्य । (गीतक द्वारा कहैत छथि)—

[गीत सं० — ४३]

मुनिवर ! करिअ तहिन परकार ।

नगर द्वारका गए पुनु आनिअ, तोरित नन्दकुमार ।।ध्रु०।।

दनुज - मनुज अवतार महीतल, चेदि - नृपति शिशुपाल ।

कुमरे जोहल घर, से यदि महत कर, जीव तेजब तत्काल ।।

होनि - भुवन पति अनुगत जन गति, करणामय गोपाल ।

समुचित घर हमे मन अवधारल तेजि सकल महिपाल ।।

गिरिनन्दिनि पूजय हम जाएव, बाहर देव - अंगार ।

तखने गहधू कर देव गदाधर, तेहि पय अछि सुविचार ।।

सानन्द भए मुनिराजे कहल पुनु, मने अनु मानिअ आन ।

नृप - कुमार ! अभिलाष पुरत तुअ, सुमति रमापति भान ।।

नारदः— सास्यामि पूर्ण नगरी तदीचा

तपोबलात् कृष्णमिहाऽऽनयामि ।

रामेण सार्धं यक्षुभिः समेतं

प्राप्तं विजानोहि कुमारि ! मा सुचः ।।२५।।

रविमणी—(जनाभिकम्) पिअसहीओ ! पुणोवि ममावत्थं विण्णायेहि अज्जमा

[प्रियसखी ! पुनरपि समाऽवस्थां विज्ञापय आर्यम् ।]

[गीतसं० — ४३]

तहिन = तेहन । परकार = उपाय । गए = जाय । तोरित =

गुरत । दनुज-मनुज = नरराक्षस । चेदि नृपति = चेदि देशक

राजा । अनुगत = शरणागत । अवधारल = विचारल । गि नन्दिनि

= गिरिजा । देव अंगार = देवमन्दिर । गदाधर = गदाधारी

श्रीकृष्ण । तेहि पय = हुनक घरणमे ।।

नारदः—हम श्रीकृष्णक नगरी द्वारका शीघ्र जायव ओ तपोबल है श्रीकृष्णके

एतय आनव । बलरामक संग यादव सब है मुक्त श्रीकृष्णके एतय

पहुँचले सुकू । कुमारी ! शोक जनु करी ।।२५।।

रविमणी—(कनकसुखी) प्रिय सखीलोकनि ! आओरी हमर दशा आर्वके

बुनविबनु ।

सखी—मुनिराज ! विश्वही ए अवस्थं वि कहूणिज्जं सिरिकण्ठे । [मुनिराज !
प्रियसखी अवस्थाऽपि कथनीया श्रीकृष्णाय ।]
नारदः—सर्वं ज्ञातमेव मया, तथापि पुनः कथयताम् ।
सखी—(गीतेन कथयतः—)

[गीतसं०—४४]

पुरुषहि ओ रे ।
ससिमुखि परिजन - मुखे सुन^{४१}, ए कि तुअ गुन
अमुखने नेह उपज दुन^{४२} ॥
विधिवसे^{४३} ओ रे !
वदन - इन्दु तुअ देखि वनि, ए कि भेल जनि,
प्रेम - प्रयोनधि निमगनि^{४४} ॥
अकमिते ओ रे !
कीकिल पञ्चम कल धुनि, ए कि सेहे मुनि,
पुनु पुनु मुख^{४५} दुसह गुनि ॥
तलपहि^{४६} ओ रे !
अति कोमल नलिनी - बल, ए कि विश्व भल,
परसे दगध होअ धनुवल ॥

बुहू सखी—मुनिराज ! प्रियसखीक वशा सेहो श्रीकृष्णके कहल जाय ।
नारद—सब ठा हमरा बुझले अलि, तथापि पुनः कह ।
बुहू सखी—(गीतक द्वारा कहैत छथि)—

[गीतसं०—४४]

पुरुषहि = पतिनहि । ससिमुखि = चन्द्रमुखी । परिजन मुखे
= परिवारक मुखे । अमुखने = सतत । नेह = स्नेह । दुन = द्विगुण ।
विधिवसे = संयोग सौ । वदन-इन्दु तुअ = अहोकि चन्द्रमुख ।
प्रेमप्रयोनधि = प्रेमक समुद्र मे । निमगनि = डूबलि । अकमिते =

४१ - सुन - ख । ४२ - दुन - ख । ४३ - निमगनि - क ख । ४४ - पुन
पुन मुख - ख । ४५ - तलपति - ख ।

अवधिहु ओ रे ।
न मिलत यदि निरदय हरि, ए कि छत भरि^{४७},
न जिनति आलि कोनहु परि ॥
सुसु धनि ओ रे !
सुमति रमापति बुझि कह, ए कि^{४८} धिर रह,
पुरत मनोरथ^{४९} हरि तह ॥

नारदः—^{४७}बाच्यं मयाऽन्तःस्वमशेषतोऽस्याः
तत्सन्निधौ राजकुमारिकायाः ।
यथाऽऽगमिष्यत्परधिमन्त्रेण—
स्तत् साधनीयं बहुना किमत्र ॥२५॥

(इत्याकाशमार्गेण निष्क्रान्तः)

सखी—भट्टिदारिए! अम्हे इअं^{४८} हरि-आअम-वृत्तन्तं देखीए निवेदेमह^{४९},
[भट्टिदारिके ! आवां हमं ह्यागम वृत्तन्तं देखी निवेदयामः ।]
(इति तथा कुस्तः ।)

अकस्मात्, एकाएक । तलपहि = चिन्ताशोक पर । नलिनी-बल =
पुरस्कृत प्राप्त । परसे = स्पर्श सौ । दगध = जरेत । अवधिहु =
निर्धारित समय तक । हरि = कृष्ण । आलि = सखी ।

नारद—श्रीकृष्णक लग हम एहि राजकुमारीक हृदयस्थित सकल भाव बाजव,
जेना कय कमलनयन श्रीकृष्ण एतय अओताह से हम करव । विशेष
एतय की कह ॥२६॥

(ई कहि आकाश मार्ग सँ बहार भय गेलाह ।)

बुहू सखी—राजकुमारी ! हमरा बुहू गोठय श्रीकृष्णक आगमनक समाचार
महारानी के कहि अवेत छथिनि (तहिना करैत छथि ।)

४७ - छत भरि भरि - ख । ४८ - की - क ख । ४९ - ओ - ख ।

४८ - बाच्यमया स्वमशेष - ख ।

४९ - हरिमवृत्तन्तं - ख । ४९ - निवेदेमि - ख ।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

॥ इति रुक्मिणी-परिणये नारदप्रेषणं नाम पञ्चमोऽङ्कः ॥

(सभ बहार भय गेल)

रुक्मिणी-परिणय मे 'नारदके' पठाएव' नामक
पाँचम अङ्क समाप्त

अथ षष्ठोऽङ्कः

(ततः प्रविशति शिशुपालमानीय कलहवर्धनः)

कलहवर्धनः—(कुमार-समीपमागत्य) युवराज !

सम्प्राप्तश्चैवभुवस्तव नगरमिदं मागधासौ । समेतं
पूर्यन्तां रत्नकुम्भाः सुविमल सलिलैः पल्लवास्तवयथाः ।
व्यस्यन्तां तोरणानि प्रतिभवनमतो दीपतां दीपमङ्कुरं
विप्राः सम्पूर्णकामाः क्षतिसुभगतरं शान्तिमन्त्रं पठन्तु ॥२७॥

(नेपथ्ये दुन्दुभि-ध्वनिः)

छठम अङ्क

(शिशुपाल के आनि कलहवर्धन प्रवेश करैछ ।)

कलह०—(कुमार-रुक्मीक समीप आबि) युवराज !

मगवराज जरासन्ध प्रभतिक सहित चेदिराज शिशुपाल अहाँक नगर
पहुँचि गेल छथि । पवित्र जल हाँ भरल पल्लव हाँ युक्त मुँहबला
रत्नक बेल सभ राखल जाय । प्रत्येक भवनक सोझाँ तोरण (मेह-
राज) सजाओल जाय । दीपक पाँती राखल जाय ओ पूर्णमनोरथ
ब्राह्मणलोकनि वेदक मधुर शान्तिमन्त्र पढ़थु ॥२७॥

(नेपथ्य मे बाजाक आवाज)

राजा—सर्व भविष्यति । युवराज ! भवता चैवराजं प्रतीक्ष्य तेषु तेषु वेदमस्तु
निवेशनीया वरयानिका नृपाः, परिचरणीयाश्च ।(रुक्मी सहर्षमुत्थाप्य निष्क्रम्य च कलहवर्धनेन सह सैन्यमालो-
कयति । तत्र गीतम्—)

[गीत सं-४५]

आखल नृप दमघोष कुमार । भीषम भुवति^१ भवन दुभार ॥
रथ मातङ्ग तुरङ्ग दुरस्त । कोने तसु गनत पदाति अनात ॥
बहुविध^२ वरन पताका भास । जनि सुरपति धनु उगल अकास ॥
घन धुनि सन रन दुन्दुभि बाज । निरमल वसन भवन चय छाज ॥
तसु सयना कत करव बखान । हरिवद प्रणत रमापति शान ॥

(रुक्मी सानन्ध सर्वेषां दिनयादिकमाचरति)

राजा—सब होयत । युवराज ! अहाँक चेदिराजक प्रतीक्षा कय निश्चरित कर
सभ मे वरियाती मे आयल राजासभ केँ ठहराज ओ स्वागत कर ।(रुक्मी सहर्ष ऊठि, बहार भय कलहवर्धनक संग सेनासभ केँ
बैसैत छथि । ततय गीत—)

(रुक्मी आनन्दपूर्वक सभक प्रार्थना आदि करैत छथि ।)

[गीत सं-४६]

दमघोष-कुमार = राजा दमघोषक पुत्र । शिशुपाल । मातङ्ग = हाथी ।
तुरङ्ग = घोड़ा । दुरस्त = अतिबलशाली । पदाति = पैदल सेना । वरन
= रंगक । भास = सोभित । सुरपति-धनु = शत्रुघनुष, पतिसोजा । घन
धुनि = मेघक गर्जन । रन-दुन्दुभि = युद्धक बाजा । निरमल वसन =
स्वच्छ वस्त्र । भवन-चय = भवन सभ मे । छाज = सोभित । तसु =
हनक (शिशुपालक) । सयना = सेना ।

रविमणी—(आकर्ष्य) सहि ! कहि दाणि^१ खणे खणे दुन्दुही साडीयदि ?
[सखि ! वव इदानीं क्षणे क्षणे दुन्दुभी ताड्यते ?]
सखी—सहि ! आभयो कबु ह्तासो चेदि-भूयई । [सखि ! आगतः खलु
हताशः चेदिभूयतिः ।]
रविमणी—(सवाप्य गीतेन वदति—)

[गीतसं०—४६]

उपगत भेल शिशुपाल । न देखिअ देव गोपाल ॥

सजनि ॥ ४७ ॥

अभगति अति बुझि मोरि । विमुशि भेलि जनि मोरि ॥

की जनि विधि यइ वाम । ते नहि^२ पुर मन वाम ॥

पुख कलुष चय जानि । न गइत हरि मोर पानि ॥

अदि न^३ आओत प्रजराज । मोहि जीवन नहि काज ॥

सुमति रमावति भान । अवस आओत भगवान ॥

सखी—पिअसहि ! समस्तसहि समस्तसहि ! [प्रियसखि ! समा-
श्वसिहि, समाश्वसिहि ।]

रविमणी—(सूनि) सखि ! कतय एखन लगले लगले बाजा बजैछ ?

दुहु सखी—सखि ! आवि गेल देवजश्या (जकर आशा मारल छै) शिशुपाल।

रविमणी—(नोर सहित गीतक द्वारा बजैत छथि—)

[गीतसं० ४६]

उपगत = उपस्थित । अभगति = अभक्ति । विधि = विधाता,

भाग्य । वाम = विपरीत । कलुष चय = वापक डेर । पानि = हाथ ।

प्रजराज = कृष्ण । अवस = अवश्य ॥

दुहु सखी—प्रिय सखि ! धैर्य धरू, धैर्य धरू ।

१ - दाणि स्वर्णो शणो दुन्दुही - वा । ४ - चेदि चेदि भूयई - वा ।

२ - कीवहु - वा । ३ - न - वा । ४ - ते - वा ।

रविमणी—कथं मुनीसरो वि ण आअदो ? [कथं मुनीश्वरोऽपि नागतः ?]
(वामाक्षिरूपन्दनादिकं सूचित्वा पुन गीतेन वदति—)

[गीत सं०—४७]

किए बहु^४ अकमित सञ्चर, उर भुज लोचन वाम ।कहिअ विचारि विदुषि^५ सखि, अयहु पुरत मोर^६ काम ॥

जजो किछु पुरुष कयल हुमे, सुरमधिर निरमान ।

इत उपवाग नियम विधि, वसन विभूषण दान ॥

कञ्चन रजत तुला देल, विरचल विमल सङाग ।

तजो हरि हमर गहधु कर, दुर कय सञ्चल अभाग^७ ॥^८ नगर निकट उपगत हरि आदि, करिअ अनुमान ।

सखिगत भाष सगुन बुझि, सुमति रमावति भान ॥

(ततः प्रविशति नारदः)

नारदः^९—नृपकुमारिके ! दिन्द्या बहं^{१०} से । समागच्छति श्रीकृष्णः ।रविमणी—की नारदो नहि अयलाह ? (वामा आँखि फड़कव सूचित कय फेर
गीतक द्वारा बजैत छथि—)

[गीतसं०—४७]

अकमित = कस्मात्, एकाएक । सञ्चर = फड़कैत अछि । उर भुज
= छाती, आँहि ओ आँखि तीव्रक वामा भाग । विदुषि = बुद्धिआरि ।
सुरमधिर = देवताक भयन । कञ्चन रजत = सोना ओ चानी । तुला देल =
तुलादान कयल (तराजू पर अपन शरीरक बराबर सोनाक दान कयल ।)
विरचल = बनवाओल । सङाग = पोखरि । उपगत = आगल । भाष =
बजैछ ॥

(तसन नारद प्रवेश करैत छथि ।)

नारद राजकुमारी ! भागमति छी । अयैत छथि श्रीकृष्ण ।

४ - किअबहु - वा । ५ - विदु मुझि - वा । ६ - मन - वा । ७ - अनु-
मान - वा । ८ - न - वा । ९ - नारद - वा । १० - बहं - वा ।

रुक्मिणी—(सामर्थ्यं प्रणम्य^{१४} अतिसत्कारं कृत्वा) सहि सुदक्षिणे ! विष्णा-
वेहि^{१५} अर्जुन, कुदो वट्टदि^{१६} दाणि अज्जलत्तो ? [सखि सुद-
क्षिणे ! विज्ञापय आर्य, कुत्र वर्तते इदानीमार्यपुत्रः ?]

सुदक्षिणा—(पृच्छति ।)

नारदः—(श्लोकेन—) मम वचनमक्षेपतो निश्चय

जगमारुह्य हरिः पुरः प्रतस्थे^{१७} ।

यदुल्लसुपनीय रीहिणेयम्

स्तमनुजगाम धृतामुधो रथस्थः ॥२८॥

तत्तत्तार्थमार्गं तथाश्वासनार्थं तेनानुज्ञातस्तपोवलेन भीमतेयावपि
प्रागुपगतोऽस्मि ।

रुक्मिणी - (सामर्थ्यं प्रणम्य पूजयति ।)

नारदः—मया पुनरपि श्रीकृष्णनिकटमेव तथ वृत्तान्तकथनाय गम्यते । (इति
निष्क्रान्तः ।)

रुक्मिणी—(आनन्दपूर्वकं प्रणामं कय ओ अतिसत्कारं कय) सखि सुदक्षिणे !
पुच्छियनु आर्य नारदके^{१८} जे कतय छथि एवन आर्यपुत्र (मन मे संक-
ल्पित पति श्रीकृष्ण) ।

सुदक्षिणा—(पुछैत छथि ।)

नारद—(श्लोकक द्वारा) -- हमर वचन पुरा पुरा सुनिके^{१९} गहड़ पर चढ़ि
श्रीकृष्ण प्रस्थान कयलनि । यादव-सेना लय बलराम अस्थ धारण
कय रथ पर चढ़ि हुनक पाछ सँ बिदा भेलाह ॥२८॥

तखन आधा बाट मे अहाँक आस्थासनक हेतु हुनक आज्ञा पाबि तपस्याक
बले गहड़ह सँ पहिनहि आयल छी ।

रुक्मिणी - (आनन्दपूर्वक प्रणाम कय पूजा करैत छथि ।)

नारद - हम पुनः श्रीकृष्णक समीप अहाँक हाल-चाल कहवाक लेल जाइत
छी । (बहार भय भेलाह ।)

१४—प्रणमति सत्कारं - छ ।

१५ - विष्णवेहि - क. षा । १६ - वट्टदि - षा । १७ - प्रतस्थौ - षा ।

(नेपथ्ये शङ्खध्वनिः)

राजा—(आकर्ष्य) नयसागर ! पाञ्चजन्यस्यैव ध्वनिरुपलक्ष्यते । तदवगम्य-
ताम् ।

कञ्चुकी—(अवलोक्य पुनरागत्य) महाराज ! निर्णीतं मया । (श्लोकेन वदति) —

आयातो मधुसूदनस्तव पुरं रामादिभि र्गदनीः

सार्धं देत्यरिपुः संगेन्दुमविरादाख्य सखीश्वरः ।

तं चाऽनीय विनीय सम्प्रति पुरो गत्वा समाधीयतां

सम्यक् पूजनमस्य तेन भविता पूर्वापरावेक्षमा ॥ २९॥

राजा - सम्पुपदिष्टम् । (इति बहि गत्वा श्रीकृष्णस्य आतिथ्य-पूजनादिकं
विषयं सैन्यमुपवेश्य पुनरायातः ।)

(ततो नगरस्थितः श्रीकृष्णमवलोक्य गायन्ति—)

(नेपथ्य मे शङ्खक आवाज)

राजा (धुनि) नयसागर ! पाञ्चजन्य शङ्खक सनक ध्वनि बुझि पढ़ै छ । से
बुझ सँ ।

कञ्चुकी - (देखि केर आबि) महाराज ! हम निर्णय कयल * (श्लोकक
द्वारा बजैत छथि) -

अपनेक नगर मे बलराम आदि यादवक संग गहड़ पर
चढ़ि सखीश्वर मधुसूदन देत्यारि श्रीकृष्ण कीप्रता सँ आबि भेलाह
अछि । एवन आगू जाय हुनका आनि विनती कय विधिपूर्वक
हुनक पूजा कयल जाओ, ताहि सँ पहिलुका अपराधक क्षमा भय
जायत ॥२९॥

राजा—नीक विचार देखहुँ । (बाहर जाय श्रीकृष्णक अतिशिसत्कार ओ
सेनाक रहवाक व्यवस्था कय पुनः अवैत छथि ।)

(तखन नगरक श्रीमय श्रीकृष्णके ३८ - ३९)

[गीतसं०-४८]

इन्दु^१ - विनिन्दक ओ रे, हरिमुख ।
 देखितहि हरल सकल दुख ॥
 बहुत - जनम तपे ओ रे, पाओल ।
 लोचन - युगल जुझाओल ॥
 रूप सपमा नहि ओ रे, होअ कहि ।
 जनि^२ - रतिपति अवतर महि ॥
 विहि कुदिवस मोर ओ रे भेटल ।
 ते^३ जनि माधव भेटल ॥
 हरि गहथु हरि ओ रे, तसु कर ।
 कुमुदिनि मिलथ सुधाकर ॥
 सुमति रमापति ओ रे, दिव कह ।
 कुदिवस नहि निरवधि रह^४ ॥

श्रीकृष्णः—(संभ्यादिकं निवेद्य स्वयं विश्राम्य च नारदं प्रति, जनाभितकम्)
 देवर्षे ! कथ्यतां तत्प्रीया वार्ता ।

नारदः—तद्वातां मया द्वारयत्प्रामेकोक्त । तथाप्याऽऽकर्म्यताम्^{१०} । (गीतेन
 वदति—)

गीतसं०-४८

इन्दुविनिन्दक = चन्द्रमाक निन्दा करय बला । लोचन-युगल =
 दुनू ओंखि । रतिपति = कामदेव पृथ्वी पर अवतार लेने होथि । विहि
 कुदिवस = भाग्यक अधलाह दिन । सुधाकर = चन्द्रमा दिव = निदबया ।

श्रीकृष्ण - (सेना आदिक समावेश कय, स्वयं विश्राम कय नारदक प्रति कन-
 फू सकी कय) देवर्षि ! कहू हुनक समाचार ।

नारद—हुनक हालत ते हम द्वारके मे कहलहु^१ । तथापि सुनू । गीतक द्वारा
 कहैत छथि ।)

१ - एहि गीत के उमापतिक गीत संग्रह मे भूम ही राखल गेल अछि । दृष्टव्य-
 डॉ० रामवेश सा - उमापति - पृ० ३६ १ - १८० जन - क ।
 १६ - रह - क । २० - कर्म्य - क ।

[गीतसं०-४९]

आ हे माधव ! कि कहब तसु परितापे ।
 तुअ गुन लुबुधि मुगुधि रह वरतनु,
 अनुखन परिजन कापे ॥ध्रु०॥
 देह अनल वर, गहन माल धर,
 तल्प अल्प न सोहावे ।
 चांद गरल वम, हार छरग सम,
 नयन नीम्ब नहि आवे ॥
 मलय पवन वह, सेहओ ने धनि सह,
 अधिक छाह^२ उपजावे ।
 चानन^३ तरस परस नहि मानए,
 दरस तरस मने^४ आवे ॥
 मुखि मुखि खस, मेदनि^५ परबस,
 जतनहु सखि न सम्भावे ।
 जीवन धर धनि, अवधि आस गनि,
 केवल तुअ अभिलाषे ॥
 हरि उपमत भेल, कुदिवस दुरि गेल,
 पुरल सवे अभिमाने ।

[गीतसं०-४९]

तसु परितापे = हुनक दुःख । मुगुधि = मुग्ध । वरतनु = सुन्दरी ।
 परिजन कापे = परिवारक लोक हुनक दशा देखि कैपैत अछि । अनल
 आगि । तल्प = तलप, ओछान । अल्प = थोड़वहु । गरल वम = विष
 जमिलैत अछि । छरग = सापा । मलय पवन = मलयाधलक हवा (दखि-
 नाही) । परस = स्वयं । दरस = दर्शनहि सौ । तरस = आस, डर । मेदनि
 पृथ्वी पर । परबस = पराधीन भय । सम्भावे = बजैत छथि । अवधि

२१ - वाह - हा । २२ - चानन - हा । २३ - मने - क ।
 २४ - से धनि पर सस - क ।

वैरज अभिमनः पाव सुभ^{२५} नखतः
सुमति रमापति भाते ॥

श्रीकृष्णः—(स्वगतम्) अहो प्रमादः ! मम कारणादेन दुःखमनुभवति नृपकुमारिका ? (प्रकाशम्) देवर्षे ! साम्प्रतं तत्सन्निधौ भवता एवं वाक्यम् (श्लोकेन) :—

यथा विषीदत्यनिशं मृगाक्षी
तथैव ^{२६}सस्तप्तमवेहि मामपि ।
भूराल—वर्गान् परिभूय तत्करं
हृत्वा^{२७} प्रहीदयामि बलात् प्रभाते ॥३०॥

नारदः—भद्रम् । तामाश्वास्य स्वराधं कुमारं नृपं देवीं च निषोध्य तस्य हरणवसरे पुनर्देवमवलोकयामि । (इति निष्क्रम्य तथा कुतयान् ।)

आस = विरहक सीमा (समाप्तिक) आशा । तुअ अभिलाषे = अहो क प्रार्थितक मनोरथ । हरि उपगत = श्रीकृष्ण उपस्थित । अभिमन = अभीष्ट । सुभ नखत = शुभ नक्षत्र = शुभ समय ।

श्रीकृष्ण - (स्वगत) हाय रे हमर गलती ! हमरे कारणे एना दुःखक अनुभव कय रहल छथि राजकुमारी । (प्रकाश) देवर्षि ! एखन हुनका लग जाय अहाँ ई कहबनि । (श्लोकक द्वारा) : जहिना हरिण-सनक आँखिवाली ओ दुःखी छथि तहिना हमरो सन्तप्त जानयि । कान्हि भिन्नसर राजासभकेँ बलपूर्वक दबाय हुनक हरण कय लग जयबनि ॥३०॥

नारद—बड़ बीबा हुनका आश्वासन दय, सीधताक हेतु कुमार, राजा ओ महारानीकेँ नियुक्त कय रुक्मिणीक हरणक अवसर मे देखक दर्शन करब । (बहार भय तहिना कयलनि ।)

२५ - सुजन सत - क । २६ - तच्छेसुमवेहि - क । २७ - हृत्वा गमिदयामि - क ।

(नेपथ्ये—भो भो ! जरासन्ध-प्रभृतयो नृपाः ! प्रभात-समयो वृत्त-स्ततः^{२८} सज्जीभावन्तु भावन्तो^{२९}ऽश्विका-गृहगमनाय । तत्पूजनाय रुक्मिणीं गमिष्यति । तद् रक्षार्थं भवद्भिर्यत्नितव्यमिति ।)
(पुनर्नेपथ्ये वृन्दुभि-व्यतिः)

बलदेवः—(आकर्ष्य) मत्सैनिका अपि सज्जीभवन्तु ।

(ततः सर्वे यादवास्तथाऽऽचरन्ति ।)

(ततः प्रविशति पूजामभ्यार व्यवकराभिः परिचारिकाभिः समं देवी ।)

देवी—(कन्याभवनं गत्वा सहर्षम्) अहं सुदक्षिणे ! ^{३०}सुसोहणे ! तुम्हेंहि रुक्मिणीए समं सिरिगोरिए मन्दिरं^{३१} गन्तव्यं । तां उत्थेहि । [अपि सुदक्षिणे । सुशोभने ! युवाभ्यां रुक्मिण्या समं श्रीगौरीया मन्दिरं गन्तव्यम् । तद् उत्तिष्ठतम् ।]

(नेपथ्य मे— 'अओ जरासन्ध आदि राजालोकनि ! भोर भय खेल, तेँ रीयार होउ अहाँसभ गौरीक मन्दिर जयवाक लेल । हुनक पूजाक हेतु रुक्मिणी जयसीहि । हुनक रक्षाक हेतु अहाँलोकनि यत्न करब' ।)

(फेर नेपथ्य मे बाजाक आवाज)

बलदेव—(सैन) हमरो सैनिक तैयार होवओ ।

(तखन सभ यादव तहिना करैत छथि ।)

(तखन पूजाक सामग्री सँ व्यवस्था हाथवाली परिचारिकासभक संग महा-शानी प्रवेश करैत छथि ।)

देवी—(कन्याभवन जाय सहर्ष) अहं सुदक्षिणा ! सुशोभना अहाँ दुहु गीठय रुक्मिणीक संग श्रीगौरीक मन्दिर जाउ । तेँ उठैत जाउ ।

२८—स्ततः—स्त २९—X—क । ३०—हृत्वा गमिदयामि—क । ३१—अथ ही "श्रीगौरी" तक अभाव ।

(सखी रुक्मिणी^{३२} करे गृहीत्वा उखापयतः^{३३} । ततः सर्वाः
श्रीगौरी^{३४} भवनं प्रति चलिताः । तत्र गीतम् -)

[गीतसं० - ५०]

निख हित^{३५} मने अवधारी ।
गौरि पुजय^{३६} चतु राजकुमारी ॥ ध्रु० ॥
पुर - वनिता तसु सङ्ग जनेके ।
रूपे^{३७} मनोरम निपुन विवेके ॥
अरुन - वसने जित अरुनक जोती ।
भूषन मनि कञ्चन गजमोती ॥
लोहित फूल अनुलेपन माले ।
सिन्दुर नेओज^{३८} तमोर विसाले ॥
गुग्गुल अगर धूप करे दीपे ।
लय सखिजन तसु चलव समीपे ॥
सूमति रमापति कह दिहु जानी ।
सवे अभिमत फल पुरधू भवानी ॥

सखी—(जनान्तिकम्) सहि ! सम्पदं ह्रियअदिट्ठं हरिस-वुत्तन्तं कवेहि ।
[सखि ! ताम्रपतं हृदयस्थितं हर्षय, तन्तं कथय ।]

(इह सखी रुक्मिणीके हाथ छय उठवैत छथि । तखन सब श्रीगौरीक
भवन दिख दिदा-डोइत छथि । ताहि पूरायक गीत—)

[गीतसं० - ५०]

निख = अरुन । अवधारी = भूमि । पुर वनिता = नगरक स्त्रीगण । मनो-
रम = सुन्दर । निपुन = पटु । अरुन-वसने = लाल वस्त्र सँ । अरुनक = प्रातः
कालीन सूर्यक । मनि कञ्चन = मणि ओ सोना । लोहित = लाल । अनुलेपन =
चानन । नेओज = नैवेद्य । तमोर = पान । दिहु = निश्चय । अभिमत = मनोरथ ।
इह सखी—(कनकसुसकी कय) सखि ! एखन हृदयक हर्षक समाचार कहू ।

३२ - रुक्मिणी - छ । ३३ - उखापयिता-छ । ३४ - X - क ।

३५ - विवर्धित - क । ३६ - पुजन - क । ३७ - रूप - ख । ३८ - सिन्दुर संघ-
मुषारि - क; नेओजत मोर - छ ।

रुक्मिणी—(संस्कृतमाश्रित्य श्लोकेन)—

किं मे ददातु गिरिजा पारिवारिच्छितार्थं
किं वा दृश्यखिलजीवहरः कुलान्तः ।

प्राणा, - स्तथाऽप्युभयया भविताऽवसानं

दुःखस्य मेऽद्य सखि ! तेन हृदि प्रकर्षः ॥ ३१ ॥

सखी - सान्त पाव ! विअमहि ! संपदं एरिस विपिअवःणं करेसि ?
[शान्त पावम् !] प्रियसखि ! ताम्रपतमपि ईदृशं विप्रियवचनं
करोषि ?]

रुक्मिणी - सहि ! कुथो ज्जेवं निषीदं^{३९} तए ? [सखि ! कुत एव निर्णीतं
त्वया ?]

सखी - जयो संजिहिदो^{४०} वामुदेओ । [यतः सज्जिहितो वामुदेवः ।]

(ततो मठस्थलं प्राप्य सर्वाः करचरणौ प्रक्षाल्य प्रणम्य च मठं प्रवि-
शन्ति । ततो रुक्मिणी पुरस्त्रीणामुपदेशविधानेन श्रीगौरीमर्षयति ।
तत्र गीतम्—)

रुक्मिणी—(संस्कृतक अवलम्बन कय श्लोकक द्वारा)—

की त गिरिजा हमरा अभीष्ट दय देसु वा कि सभक जीवनके
हरनिहार यमराज हमर प्राण लय लेसु—तयो एहि दुनू तरहे
आइ हमर एहि दुःखक अन्त होयत । हे सखि ! ताहि सँ हमरा
हृदयमे प्रसन्नता अछि । ३१ ।

इह सखी—अनिष्ट दूर हो ! प्रियसखी ! एखनहुँ एहि प्रकारक अधलाह वचन
सजैत छी ?

रुक्मिणी—सखि ! कोना एहि तरहक निर्णय कयलहुँ तो ?

इह सखी जे कि समोदहि मे श्रीकृष्ण छथि ।

(तखन मन्दिर लग पहुँचि सब हाथ-पंजर धोय ओ प्रणाम कय मठ मे
प्रवेश करैत छथि । तखन रुक्मिणी नगरक स्त्रीगणक उपदेशक विधान सँ
श्रीगौरीक पूजा करैत छथि । तत्र गीत—)

[गीतसं०-५१]

जय देवि गौरि मृगेश्वर-गामिनि ।
रविश तनु-रवि विजित-वामिनि
दुरित खण्डित दिवस = वामिनि
राम्भु कामिनि हे ॥

करए तुभ पदकमल सेवा
निज मनोरथ सकल लेवा
सेवि दुरगत रहल के वा
मनुज^{४१} देवा हे ॥

गन्ध अञ्छत कुसुम पानी
हृषे निवेदिअ जत भवानी
लिअ सकल परिवार आनी
भगति जानी हे ॥

सदय लोचने^{४२} मोहि विहारिअ
तोरित आपद-गन पछारिअ^{४३}
अपन किकर गनि विचारिअ
रिपु संहारिअ^{४४} हे ॥

[गीतसं०-५१]

मृगेश्वर-गामिनि = सिंह पर चलनिहारि । रविश = सुन्दर । तनुरवि =
देहक सोन्दर्य वा वमक सी । विजित-वामिनि = विजुरीके जितनिहारि ।
दुरित = पापके । वामिनि = राति । कामिनि = परनी । दुरगत = दुर्दशा
मे ॥ गन्ध = घनन । कुसुम पानी = फूल ओ जल । भवानी = गौरी ।
परिवार आनी = अपन परिजन के बजाय ॥ सदय लोचने = दयायुक्त
आँखि सी । तोरित = शीघ्र । आपदगन = विपत्तिक समूहके । किकर

४१ = मनुज = क । ४२ = लोचन = क । ४३ = सवे विचारिअ = छ ।

४४ = संहारिअ = छ ।

विशरि मने^{४५} अपराध अछि जत
भइए परसनि पुरिअ अभिमत
भन रमावति कए प्रणति सत
चरन अनुगत हे ॥

(इष्टपुपचारैः सम्पूज्य, प्रणम्य वरं प्रार्थयति संस्कृतमाश्रित्य श्लोकेन—)

प्रणम्य गिरिश्रियां गिरिसुतां गणेशाऽन्वितां
विधाय पुरतोऽञ्जलिं सपदि देवि । याचे वरम् ।

^{४६}विधूय दमघोषजं ^{४७}निखिल-भूषवर्द्धः समं
प्रगृह्य करपङ्कजं भवतु मे यद्यो माधवः ॥३॥

(ततः पुरस्त्रियो देव्ये सर्वं निवेद्य भूषणैस्तां प्रसादयति ।)

मारदा—(श्रीकृष्णनिकट गत्वा) देवदेव ! रविमण्या देवी प्रपूजिता । साम्प्रतं
मठाद् बहिरागत्य गमिष्यति । तदारुह्यतां खगेन्द्र-युत्तरथः^{४८} ।

= सेवक रूपमे गणना कय । रिपु = शत्रुके ॥ परसनि = प्रसन्ना । अभि-
मत = अभीष्ट । सत = सैकड़ों । अनुगत = लागल ॥

(ई गाबि पूजासामग्री सभ सँ पूजा कय प्रणाम कय वरदान प्रार्थना
संस्कृतमे करैत छथि श्लोक द्वारा) —

गणेश-सहित महादेवक प्रिया पार्वती के प्रणाम कय आनू मे भटवय
कल झोड़ि वरदान मईत छी जे हे देवि ! सकल राजाक संग दमघोषक पुत्र
शिषुपालके बरिय के हमर करकमल पकड़ि माधव हमर स्वामी होषु ॥३॥

(तखन नगरक नारीसभ देवी गिरिजाके सबधित निवेदित कय गहना
सँ हुनका प्रसन्न करैत छथि ।)

मारदा = (श्रीकृष्णक लग जाय) देवदेव ! रविमणी गिरिजाक पूजा कय-
लनि । आव मठ सँ बहार आवि जयतीह । तँ बड़ गश्क-
युक्त रथ पर ।

४५ = मन = क । ४६ = विधाय/विधूय = क / विधाय छ । ४७ = ० ० ० = छ
(एक चरणक अमाश) । ४८ = उत्तरथः = क उत्तरथः = छ ।

श्रीकृष्णः—(आनन्दं प्रणम्य विहङ्गराजमाह्वय सम्भाष्य ४९ च) पतनेऽग्र ५० ।
सम्प्रति मया रुक्मिण्या हरणं विधेयम् । तत्र भवता तथाऽऽचर-
णीयं यथा जरासन्धादयो मत्समीपं नाशान्ति ।

गरुडः—(प्रणम्य) भगवन् ! पक्षबातेनैव तथा विधेयं मया ।

(श्रीकृष्णः तथा कृत्वा रथमध्ये स्थितः ।)

नारदः—बलदेव ! स्वयंतां समराऽऽचरणाय ।

(बलदेवो यादवैः सह सज्जीभूय स्थितः ।)

(सख्यौ रुक्मिणीं करे विधृत्य बहिः कुरुतः । ततः सर्वाश्चलिताः ।)

श्रीकृष्णः - (रुक्मिणीमवलोक्य सस्मितं स्वगतम्)-

किं काञ्चनीयं ललितका विधाति

मुपुष्पिता सा विविधैः प्रसूतैः ।

किं वा तडित् सञ्चरतीह भूमी

समन्विता चन्द्र - चकोर - चामरैः ॥३३॥

श्रीकृष्ण - (आनन्द सहित प्रणाम कय पक्षिराज गरुडके सजाय ओ बुझाय)

पक्षिराज ! एतल हम् रुक्मिणीक हरब करब । सत्य अहाँ

तेना करु जेमा जरासन्ध आदि हमरा लग नहि आवय ।

गरुड - (प्रणाम कय) भगवन् ! पक्षिक बसाते सँ तेना हम करब ।

(श्रीकृष्ण तहिना कय रथ मे बैसि रहैत छथि ।)

नारद - बलदेव ! शीघ्रता करु युद्ध करवाक लेल ।

(बलदेव यादव सभक संग तैयार भय रहैत छथि ।)

(हुह सखी रुक्मिणीकेँ हाथ पकड़ि बहार करैत छथि । तखन सभ-
केओ विदा होइत छथि ।)

श्रीकृष्ण - (रुक्मिणी केँ देखि स्वगत) -

की ई सोनाक लल्लो अनेक फूलेँ फुलायल शोभित भय रहल अछि

आ कि एहि पृथ्वी पर चन्द्रमा (मुख), चकोर पक्षी (अंजि) ओ

चामर (केश) सँ युक्त विजुरी चलैत अछि ? ॥३३॥

अथवा,

जगद् विधेतु ५१ किमिमाननक्षो

देवः सुरम्यां विदधे पताकाम् ।

यतस्तदर्थः कुशुमैरपूर्वैः

सुबिह्विताङ्गीमवलोकयामि ॥३४॥

यत् प्राक् पत्रहारक-विप्रेण कथितं तत् सर्वं सत्यमेव । अहो विधातुः

निर्माणं नैपुण्यम् ! (प्रकाशम्) देव ! आसां मध्ये का वा भीष्मसुता ?

यतः

वरत्राऽलङ्घ्य रणैश्चिचर्च युक्ताश्चन्द्रनिर्भातनाः ।

दृश्यन्ते कन्यकाः सर्वा निर्णेतुं नैव शक्यसे ॥३४॥

नारदः - (अङ्गमुत्था दशयति, इत्येकेन च वदति) -

संवेयं हरिणोक्षणा शशिमुखी कुन्दाभ-वन्तश्च ति-

बन्धूकच्छदि-निन्दकाऽथरुचिः कामर्या तडित्सन्निभा ।

अथवा,

की कामदेव संसारकेँ जितबाक हेतु एहि सुन्दर पताकाक रचना

कयल अछि ? कियेक तँ हुनक अस्त्र अपूर्व फूलसभक चिह्न सँ

युक्त अङ्गवाली हिनका (रुक्मिणीकेँ) देखि रहल छी ॥३४॥

जे पहिले छोटी लय गेनिहार ब्राह्मण कहलनि से सभ टा सत्ये । अहो
विधाताक रचना - पटता । (प्रकाश) देव नारद ! एहिमे के भीष्मक पत्नी
रुक्मिणी थिकीह ? कियेक तँ,

अङ्गुष्ठ वस्त्र ओ गहनासभ सँ युक्त चन्द्रमुखी सभ कन्या देखि पड़ैत

छथि । अतः निर्णय नहि कयल जाय सकैछ ॥३४॥

नारद—(अङ्गुरी सँ देखवैत छथि ओ वणीकक द्वारा बजैत छथि) -

उपेह ई हरिणसनक आँखवाली, चन्द्रमुखी, कुन्दक फूल सनक दाँतक
चमकवाली, सधुरी फूलक काम्तिकेँ अपन ठोर सँ निन्दित करयवाली, काम्ति

५१ - किमु मा - ख ।

आजन्वामर-कुन्तला कुक्षरचा सोवर्णकञ्जधियं
निन्दन्ती करिगामिनी प्रियसखीमालम्ब्य याति स्फुटम् ॥३६॥

श्रीकृष्णः—(उच्चैः विहस्य) देव ! पश्य, पश्य कौतूहलम् । आश्चर्यम् !
सपदि नृपसुताया वीक्ष्य सौन्दर्यमस्याः
कुसुमविशिष्ट-बाणं निर्दयं पीड्यमानाः ।
विषण्ण-हृदय-देहाः सम्भ्रमाकुञ्जिताश्वा
रथ-कचि - तुरगेभ्यः सम्पतन्तीह वीराः ॥३७॥

तस्मादेव एवाऽस्या हरणावसरः ।

रविमणी—(ज्वालितकम्) सुदक्षिणे ! सम्पदं वि ण आजदो देवो^{५३} । [सखि
सुदक्षिणे । साम्प्रतमपि नागतो देवः ।]

सखी—सहि ! पेक्ख, पेक्ख, एसा उटज-^{५४}वृक्ष-पासोवट्ठिओ सदल इन्दीवर-
तडिच्छवी^{५५} दीसइ । [सखि ! प्रेक्षस्वः प्रेक्षस्व, एष कुटज-वृक्ष-
पादवोपस्थितः सदलेन्दीवर-तडिच्छवि दृश्यते ।]

सं विजुरीत समान, चमकत चामर सनक केशवाली, स्तनक सुन्दरता सौ
सोपाक कमलक घोभाके^{५६} निन्दित करैत हाथी सनक गतिवाली रविमणी
प्रियसखीक आश्रय लय स्पष्ट जाय रहल अछि ॥३६॥

श्रीकृष्ण—(जोर सौ हसि) देव ! देखू, देखू अद्भुत बात ! आश्चर्य !

एहि राजकुमारीक सुन्दरताके देखि सटदय कामदेवक बाणसभ सौ निर्द-
यतापूर्वक पीटल जाइत, हृदय ओ देह सौ विषण्ण, हड़बड़ाव अस्व त्याग कय-
निहार वीर सभ रथ हाथी ओ घोड़ा पर सौ एतय खसि रहल छथि ॥३७॥

ते इयेह हिनक हरणक समय थिक ।

रविमणी—(कनफुसकी कय) सखी सुदक्षिणा ! एहखन देव नहि अवललह ।

बुह सखी—देखू, देखू, इयेह अगस्त्य-वृक्षक लग उपस्थित पात सहित नील-
कमल ओ विजुरीक समान घोभावला देखि पड़ैत छथि ।

५२—०—ख । १—विरज—क, ख । ५३—×—स (एहि पांसीक अभाव) ।

५४—रुक्म—ख ; वषा सखसु सवइ सदल हिन्दलतोच्छवी—क । ५५—त-विष-

सच्छवी—ख ।

(रविमणी सहर्षं वामकराग्रेण कुन्तलानपसार्य विलोकयति ।)

श्रीकृष्णः—(सत्वरम्) वैनतेय ! करोतु भवान् प्रयत्नम् । मया पुनरिदानीम्
अस्मान् नृपसुतायाः करकमलं कान्तमालम्ब्य सफलो निजावतारः
क्रियते, प्रसभात् कृतार्थश्च । (इति द्रुतमुपगत्य रविमणीं करे
गृहीत्वा रथे संस्थापयति ।)

रविमणी—हड्डी ! हड्डी !! अच्छाहिअं संवत्तं !! । [हा थिक् ! हा थिक् !
अस्याहितं संवत्तम् !!] (इति वेपते) ।

श्रीकृष्णः—(श्लोकेनाऽऽशयति ।)

अयि वरीर ! सरोवर - लोचने !

अवनिपादमिदं विफलं^{५६} त्यज ।

न सहते तव मध्यमिह प्रिये ।

स्तनभराऽतिशयं तनु - वेपनात् ॥३८॥

रविमणी—(किञ्चित्ताश्चर्य) अज्जसत्त ! सहीओ जण कहि ? [आर्यपुत्र !
सखी पुनः कुत्र ?]

(रविमणी सहर्षं वामा हाथक अग्रभाग सौ केश हटाय देखैत
छथि ।)

श्रीकृष्ण—(सटदय) गरुड़ ! करु अहाँ प्रयास । हम एखन एहि राजकुमारीक
सुन्दर करकमल पकड़ि अपन अवतार के सफल करैत छी ओ
हठात् कृतार्थ सौहो । (सट दय लग जाय रविमणीके डुर हाथ धम
रथमे बैसबैत छथि ।)

रविमणी—हाय ! हाय ! अनर्थ भेल !! (कंपैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—(श्लोकक द्वारा आश्वासन दैत छथि) —

अए सुन्दर जाँध ओ कमल सनक आँखिवाली ! एहि विफल डर
ओ दुःख के छोड़ । हे प्रिये ! अहाँक देहक ई मध्यभाग स्तनक
भारके देहक कम्पन सौ नहि सहि रहल अछि ॥३८॥

रविमणी—(किछु आश्चर्य भय) आर्यपुत्र ! बुह सखी कतय छथि ?

श्रीकृष्णः—ते^{५३} अपि महर्षेस्तपोबलाद् आगमिष्यतः ।

(इति निष्क्रान्तः^{५४} ।)

(नेपथ्ये—‘भो भो जरासन्ध-पूभृतयो महारथिनः शृण्वन्तु भवन्तः’^{५५}
इति गीतेन वृत्तमावेदयति) :—

[गीतसं०—५२]

रुकुमद कुमर, मगध - महिपाल ।
नृप दमघोष सहित शिशुपाल ॥
सोम, सुनीथ, कलिङ्गक - राज ।
सब मिलि राखिअ^{५६} भुजबल लाज ॥
सबहु धनुर्धर भय एकठाम ।
गहिअ कमान करिअ संग्राम ॥
रुकुमिनि करे नहि रखहि चढ़ाय ।
लप गेल गोविन्द^{५७} गच्छ बड़ाय^{५८} ॥
जावहि निज मन्दिर नहि जाय ।
पण सजो आनिअ ताहि^{५९} छोड़ाय ॥
हरि पद प्रणत रमापति भान ।
सिंह नरेन्द्र महीपति जान ॥

श्रीकृष्ण—ओहो दुनू महर्षिक तपोबल सँ अजोतीहि ।

(सभ बहार भय गेलाह ।)

(नेपथ्य मे—‘अओ जरासन्ध आदि महारथीलोकनि ! अहाँसभ
सुनैत जाउ’ । गीतक द्वारा घटनाक वर्णन करैत छथि ।)

[गीतसं०—५२]

कमान = धनुष । संग्राम = युद्ध । निज मन्दिर = अ न घर ॥

(पुन नैपथ्ये दुन्दुभि-रुक्मिनिः । जरासन्ध-आदयस्तथाऽऽचरन्ति ।)

रुक्मी - (समीपं) अश्वन्तु भूषा !

आनानीय स्वसारं स्वामहत्त्वा केशवीं युधि ।

मयिद्वारवधातव्यं न प्रवेक्ष्यामि कुण्डनम् ॥३६॥

(इति प्रतिज्ञाय एकरथेनैव धावति ।)

नारदः—भगवन् ! यास्यामि सम्प्रति भवद्-धातु-संग्राम दर्शनाय ।

श्रीकृष्णः—देवर्षे ! सुदक्षिणा-सुशोभने प्रियायाः समीपं द्रुतं प्रापणीये ।

नारदः—ताभ्यां सहैव द्वारवतीमागमिष्ये । (इति निष्क्रम्य तयोः समीपमा-
गतः ।)

सखी^{६०}—(अवलोक्य सानन्दं पृणम्य) अज्ज ! केण उण उवाएण पिअसहीए
पाणिमाह-महूससं अवलोइस्सामो ? [आर्य ! केन पुनस्वराधेन पिय-
सख्याः पाणिग्रहं महोत्सवमवलोकयिष्यामः ?]

(फेर नैपथ्यमे बाजाक आवाजः । जरासन्ध आदि तहिना करैछ ।)

रुक्मी—(कोध सँ) सुनैत जाउ राजालोकनि !

अपन बहिनिके^{६१} विनु अन्ते ओ युद्ध मे कृष्णके^{६२} विनु मारने
अपन कुण्डन पुर मे प्रवेश नहि करब से अहाँलोकनि जर्नैत जाउ ॥३६॥

(ई प्रतिज्ञा कय केवल एक रथसँ दीइत छथि ।)

नारद—भगवन् ! एखन हम अपनेक भाइक युद्ध देखय जायब ।

श्रीकृष्ण—देवर्षि ! सुदक्षिणा ओ सुशोभना के^{६३} पियाक समीप भट दय पहुँ-
चाउ ।

नारद—द्रुतका द्रुतक संगहि हम द्वारका आयब । (निकलि ओहि द्रुतक समीप
पहुँचलाह ।)

दुहू सखी—(देखि आनन्दपूर्वक पृणाय कय) आर्य ! कोन रूपय सँ पियसखीक
विवाह-महोत्सव देखब ?

नारदः - तपोबलाद् आक्षोपणी-विद्यया नभोमान्नेषीव तत्र प्रापयामि । तावद्
युद्धमालोक्य ।

सखी - भद्र । [भद्रम् ।]

नारदः - पश्य । (गीतेन वदति) -

[गीतसं०-५३]

तोरित कुमर गेल हरि-सन्निधान ।

एकहि रथे^{६४} कर बड़ अभिमान ॥१॥

कतय जाह माधव ! कय चोरि ।

छाड़ि देह नृप-कमरि मोरि ॥२॥

नहि तओ करव महा-रत्न^{६५} चोर ।

सर परहारे हरव जिव तोर ॥३॥

सखी - अच्छरिअं ! हुक्कर^{६६} कथेदि भट्टिदारओ । 'कं वा भविस्सदि ।

[आश्चर्यम् ! दुष्कर^{६७} कथयति भट्टिदारकः, किं वा भविष्यति ?]

नारदः - (बिहस्य) पश्य,

हँसि काटल तमु धनुषं मुरारि ।

सारथि^{६८} हनल, तुरङ्गम चारि ॥४॥

नारद - तपस्याक बलसँ आक्षोपणी नामक(लोकके) पलमे दूर पहुँचावधवाली)

विद्याक द्वारा आकाशेक बाट सँ ओतय पहुँचवैत छी । तावत् युद्ध
देखू ।

दुनू सखी - बड़ दीव ।

नारद - देखू । (गीतक द्वारा कहैत छथि) -

[गीतसं०-५३]

हरि-सन्निधान = कुष्णक निकट । सर परहारे = बाणक प्रहार सँ ।

जिव = जीवत ॥३॥

दुनू सखी - आश्चर्य ! दुष्कर कहैत छथि राजकुमार, की होयत की ने ?

नारद - (हँसि) देखू, मुरारि = कुष्ण । तुरङ्गम = घोड़ा ॥४॥

६४ = कय - क । ६५ = महा-रत्न - ज । ६६ = हलसा 'क' ; हव स - 'ल' ।

सखी - हड्डी ! हड्डी ! सम्पद^{६९} न भविस्सदि । [हा धिक् ! हा धिक् !
सम्पत् न भविष्यति ।]

नारदः - न भेतव्यम् । पश्य, पश्य -

भद्र^{७०} पदाति खड्ग लय हाथ ।

गेल कुमार निकट यदुनाथ ॥५॥

सैहओ काटि पुनु^{७१} हसि यदुनाथ ।

कुमर बाधल रथहि लमाय ॥६॥

सुमति रमापति कहू परमान ।

सिंह नरेअ सकल रस जान ॥७॥

सखी - (अवलोक्य) अञ्ज ! अदी वडुहँ^{७२} देवस्स रहो इस्सरहीणो खगबई
दीसदि । [आर्य ! अतो वद्धते देवस्य रथः । ईश्वरहीनः खगपति
दृश्यते ।]

नारदः - स तु रविमणी-सहितो द्वारवतीं सम्प्राप्तः । संप्रति बलदेवस्य संग्राम-
मथलोक्य । (कञ्चित् विश्वसिता जरासन्धादयः शिशुपाल-सहिताः
पलायिताः । किञ्चिद् दूरे स्थित्वा हतदार-सन्निभं शोषुच्यमानं
चैत्रराजमाश्वासयन्ति । बलदेवश्च तूर्पादिघोरैः प्रहृष्टः स्त्री पुरीं

दुनू सखी - हाय धिक्, हाय धिक् ! आब नहि बँचताहँ ।

नारद - डर जगु करी । देखू, देखू -

भद्र पदाति = पददल भय के । खड्ग = तरवारि । कुमार = स्वमी ॥५॥

यदुनाथ = कुष्ण ॥६॥

दुनू सखी - (देखि) आर्य ! आब देवक रथ आयू बडैत अछि । भगवान्, कुष्ण सँ
हीन गरुड़ देखि पडैत छथि ।

नारद - ओ तँ रविमणी सहित द्वारका पहुँचि गेलाह । एखन बलदेवक युद्ध
देखू । (किछु काल देखि आनन्दपूर्णक) देखू, देखू बलदेव आदि सँ
हराओल जरासन्ध-आदि शिशुपाल सहित पड़ावल । किछु दूर पर
ठाड़ भय स्त्रीहरण भेल उपनि क समान अतिशोक करैत चैदिराज-

७० = पददल शीघ्र - क । ७१ = हरि - क । ७२ = वरुड़ - क य ।

यादवेः सह प्रयाति । ततो भवतीभ्यां सह मयापि तत्र गत्वा बलदेवा-
दीनां समरवृत्तान्तः श्रीकृष्ण-हस्तिमण्योः समीपे वर्णनीयः । तावन्नेके
निमील्य भवन्ती तिष्ठन्ताम् ।

(उभे सानन्दं प्रणम्य तथा चक्रुः । नारद आक्षेपणी-सिद्धिबलात्
ताभ्यां सह द्वारवत्या उद्यानमुपगतः ।)

नारदः—अयि ; सम्मोलय लोचने । एषा द्वारवती । अक्षोपवने श्रीकृष्ण-
स्तव सख्या सह तिष्ठति । पश्यामस्तावत् ।

(ततः सर्वे श्रीकृष्णनिकटमागताः)

हस्तिमणी—(सानन्दम्) पिअसहीओ ! कखेहि आगमनवृत्तान्तं समलस अ ।
[प्रियसखी ! कथयतम आगमन-वृत्तान्तं समरस्य च ।]

सखी—(सानन्दम्) अजलस प्यसादेण पुणोवि पिअसही छिट्ठा । समल-
वृत्तन्तं उण अज्जो निवेदइस्सवि । [आर्यस्य प्रसादेन पुनरपि
प्रियसखी वृष्टा । समरवृत्तान्तं पुनरार्यो निवेदयिष्यति ।]

शिषुपाल के सभ केओ आश्वासन देत छेक । आ बलदेव रणवाक्य
आवाजसँ प्रसन्न भेल अपन सगरी यादव सभक संग जाइत छथि । रीं
अहाँ दुनूक संग हमहुँ ओतय जाय बलदेव-आदिक युद्धक समाचार
श्रीकृष्ण ओ हस्तिमणीक समीप मे वर्णन करब । तावत् आँखि
मूनि अहाँ दुनू रहू ।

(दुनू आनन्दपूर्वक प्रणाम कर तहिना कयलनि । नारद आक्षेपणी-
सिद्धिक अलें हुनका दुनूक संग द्वारकाक फुलवाड़ी मे पहुँचि भेलाह ।)

नारद—हए ! आँखि खोलह । ई द्वारवती थिक । एहि फुलवाड़ी मे
श्रीकृष्ण तोहर सखीक संग छथि । देखियनु तावत् ।

(तजन सभ श्रीकृष्णक निकट पहुँचल ।)

हस्तिमणी—(आनन्दपूर्वक) हए दुनू प्रियसखी ! कहह अयवाक ओ युद्धक
समाचार ।

दुनू सखी—(आनन्दपूर्वक) आर्यक कृपा सँ पुनः प्रियसखीकेँ देखलहुँ । युद्धक
समाचार ही आर्य मुनओताह ।

(हस्तिमणी नारदं प्रणमति ।)

नारदः—भगवन् ! श्रीकृष्ण ! जित बलदेवेन *० सर्वाशत्रुवलं, अन्यैरपि
*१ तावकः ।

श्रीकृष्णः—देवर्षे ! विशेषेणाऽऽवेदय ।

नारदः—(सीतेन वर्णयति)--

[गीतसं—५४]

—आ रे ॥ ध्रु ० ॥

भीमलदेव जरासन्ध *२ जीतल, दन्तवदन अकूरर ।
विषयु गवेषने *३ जीति पडाओल, वेदिनृपतिधर शूरे ॥
चक्रदेवे रत्न जितल विदूरथ, निवृत्त शत्रु कालिङ्ग ।
कृतवर्माओ सुनीबहि जीतल, कङ्क जितल नृप अङ्गा ॥
विषके सत्यक जीतल रिपुबल, वधूत कणल रन काजा ।
पुनु मुखलायुध जीत इमासुर, मारल बङ्गक राजा ॥
बहुत मतङ्ग सुरङ्ग *४ कवम्भहि, रङ्गभूमि भेल भीमा ।
अगति धीर सगीर खसल जत, कोने कहब तमु सीमा ।

(हस्तिमणी नारदकेँ प्रणाम करैत छथि ।)

नारद—भगवान् श्रीकृष्ण ! बलदेव सकल सन्सेना केँ जितलनि ओ अहाँक
आनो महारथीलोकनि विजयी भेलाह ।

श्रीकृष्ण—देवर्षि ! विशेषरूपेँ कहू ।

नारद—(गीतक द्वारा वर्णन करैत छथि)--

गीतसं—५४

दन्तवदन अकूरर = दन्तवध नामक दैत्यकेँ यादव अकूर जीतल ।
विषयु = एहि नामक यादव । गवेषने = ताकि केँ । वेदिनृपतिधर = शिषु-
पालकेँ । पडाओल = कैलाओल । विदूरथ = एहि नामक कलिङ्गक (उड़ी-
साक) राजाकेँ । निवृत्त = घेरल । नृप अङ्गा = अङ्गदेशक राजाकेँ ।

*०—०—ख । ७१—०—क । ७२—जरासन्ध—क । ७३—विलय गवे-
षने—ख । ७४—अङ्गे प्रति—ख ।

समरभूमि जे तेजि पहुँचल, राखल^{११} सएह पुराने ।
यादव-गत सभ अक्षत आएल, सुमति^{१२} रामायति भाने ॥
श्रीकृष्णः—सम्यग्भूतम् । आर्ये ! किमाश्चर्यम् ? मुने ! त्वयापि भद्रमालोकितं
वर्णितं च ।

(ततः प्रविशति यादवः सह बलदेवः)

बलदेवः—श्रीकृष्ण ! सम्प्रति कथं विश्रम्यते ? किन्तु स्वभवनं प्रविश्य द्रुतमेव
परिणयो विवेच्यः ।

(श्रीकृष्णः बलदेव प्रणम्य समाहितश्च च अन्येषामपि यथोचि-
तमाचरति ।)

श्रीकृष्णः—आर्य ! दिष्ट्या क्षमेण भवत्सहाया यादवा अक्षताः पुत्ररायातास्ते
च समरपरिधाताः सन्ति । ततो मत्तान् विश्रम्यताम् ।

चित्रके शयक = चित्रक के सत्यक नामक यादव । मुसलायुध = बलदेव । मतङ्ग-
तुरङ्ग कवचहि = हाथी ओ घोडाक कटल सूड़ी सभ सँ । रङ्गभूमि = युद्ध-
क्षेत्र । भीमा = भयानक । अक्षत = कुशलपूर्वक ॥

श्रीकृष्ण—ठीके भेल । आर्ये ! (रुक्मिणी !) की आश्चर्य ? मुनिवर ! अहूँ नीक
अर्का देवलहुँ ओ वर्णित कयलहुँ ।

(तखन यादवसभक संग बलदेव प्रवेश करैत छथि ।)

बलदेव—श्रीकृष्ण ! आव एखन कियेक सकल छी ? आव तँ अपन घर प्रवेश
कय जीअे विवाह करू ।

(श्रीकृष्ण बलदेवकेँ प्रणाम ओ आलिङ्गन कय आनो सभक
यथोचित सस्कार करैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—आर्य ! भाग्यवशात् कुशल पूर्णक अर्हाक सहायक यादवलोकनि सुर-
क्षित फेर अयलाह, ओसभ युद्धक कारण बाकल छथि । अतः कनेक
विधाम करैत जाउ ।

बलदेवः—(उपविश्य) देवर्षे ! स्वमग्नो गत्वा नृपायोऽसेनाय ताताय च निवेदय ।
देवक्यादयश्चाऽऽम्भा विनिवेद्याः, कुर्वन्तु सकल-माङ्गलिकमिति ।
नारदः—(पुरं प्रविश्य तत्र दलोकेन सहर्षमावेदयति) —

आयातो हरिरच्युतः स्वनगरं^{१३} रामादिभिर्बन्धुभी-

रुक्मिण्या च समन्वितो रिपुशतं जिवा सहर्षं ततः ।

कुर्वन्तु प्रतिमन्दिरं यदुकुले नार्यः पर मङ्गलं

वादित्र ध्वनि गीत-नत्त-स-युतं गृह्णन्तु भूषावलीः^{१४} ॥४०॥

(सर्वाः समाकण्ठ्य सानन्दं तथाऽऽचरन्ति । उपसेनः अस्मा
सानन्दं सम्पूज्य तेनाऽनुजातः श्रीकृष्णस्य पुरो गत्वा यथोचित-
माभाष्य च पुरं प्रवेशयति । तथा पुरस्थितो गायन्ति विहागरामे)

[गीतसं०—५५]

सजनी ! परम सुमङ्गल अज ।

रुक्मिनि देवि सहित पुनु आएल निजमन्दिर यदुराज^{१५} ॥ ४० ॥

बलदेव—(वेत्ति) देवर्षि ! अहो आय जाय राजा उपसेनकेँ ओ पिताजीकेँ कहि
अवियन्तु । देवकी-आदि मायलोकनिकेँ सेहो कहबनि जे सभ मंगल-
काज करथु ।

नारद—(नगर प्रवेश कय, आंतय-दलोकद्वारा सहर्ष कहैत छथि) —

बलराम-आदि बन्धुक ओ रुक्मिणीक संग श्रीकृष्ण शत्रुसेना
केँ जीति सहर्ष अपन नगर आबि गेलाह । अतएव नारीलोकनि
यदुकुलक प्रत्येक घर मे बाजाक शब्द, गीत, नाच आदि सँ युक्त
महान् मङ्गल करैत जथु ओ गहनासभ पहिरथु ॥४०॥

सभ कयो सूनि आनन्द सँ तेना करैत छथि । उपसेन सूनि
आनन्द पूर्णक हुनक पूजा कय हुनका सँ आज्ञा पाबि श्रीकृष्णक
आगु जाय यथोचित कहि नगर प्रवेश करबैत छथि । तखन नगरक
स्त्रीगण गवैत छथि विहागराम मे) —

[गीतसं०—५५]

निजमन्दिर = अपन घर । यदुराज = कृष्ण । मलयजरस = भोजन

मलयज रस लय भवन विलेपित, साजिअ वन्दनेवार ।
 ००अमुपम ऐपन रचिअ मनोरम, घरे घरे दीअ हेकार ।
 एला-बीज लवंग सुवासित, लदिर सहित घनसार ।
 जातीफल दय विविध भति कय करिअ तमोर ००संभार ।।
 कञ्चन-कलस सलिले परिपूरिअ, दइए सुगन्धि अनेक ।
 तसु मुख धमिअ रसालक किसलय, हरण करिअ अतिरेक ।।
 मङ्गल समय उचित सबे सखि मिलि, गाविअ सुललित राग ०० ।
 विहि पसन भेल, हरि दरसन देल, बाहुल यदुकुल भाग ।।
 देवकि रोहिनि सहित कलस कर, आनन्द यादव-तारि ।
 गाव रमापति, अति प्रमुदित मनि, अभिमत पुरभु मुरारि ।।

नारदः—(प्रविश्य) भगवन् ! वसुदेव ! भगवति देवकि ! रोहिणि ! शुभलम्भ-
 मतिक्रामति । तस्मात् परिणमतु श्रीकृष्णो हविमणीम् ।

(ततो नारदवाक्यानुसारेण श्रीकृष्णो हविमणीं परिणयति ।
 पुनरपि ता गायन्ति) :—

संसल धानन सँ । वन्दनेवार = मेहराव । एलाबीज = इलायचीक
 बीजा । सुवासित = सुगन्धित । लदिर = लायर कय । घनसार =
 कपूर । जातीफल = जायफल । तमोर संभार = पातक व्यवस्था ।
 कञ्चन-कलस = सोनाक घट । सलिले = जल सँ । तसु = ओहि बेलक
 मुँह पर । रसालक किसलय = आमक पल्लव । अतिरेक = अतिशय ।
 विहि = विधाता । रोहिनि = बलदेवक माय । कलस कर = हाथ मे
 भरल घेल ।

नारद—(प्रवेश कय) भगवान् वसुदेव ! भगवती देवकी ! रोहिणी ! शुभ
 लम्भ विलज जाय रहल अछि । ते श्रीकृष्ण हविमणी सँ विवाह करवा

(तखन नारदक वचनक अनुसार श्रीकृष्ण हविमणीसँ विवाह
 करैत छथि । पुनः स्त्रीगण गीत गर्वैत छथि) :—

[गीत सं० - ५६]

अति सुदिवस भेल आजै ।
 हकुमिनि-पाणि गह्वि वृजराजै ।।
 जनम सकल मोहि भेला ।
 विहि भेल समुल नयन सुख लेला ।।
 दुहुक वदन सानन्दा ।
 जनि कैरव मिल सारथ चन्दा ।।
 मने होअ गिरिज-भवानी ।
 कीदहु कमला-सारङ्गपानी ।।
 दुहुक विलोच छाजे ।
 मन अभिलाष वदन-रुचि छाजे ।
 सुमति रमापति भाने ।
 सिंह नरेन्द महीपति जाने ।।

(ततो वैवाहिकं कर्म परिसमाप्य श्रीकृष्णो हविमण्या सह समुपवि-
 शति ।)

नारदः—(दुर्वाशनाम्ना शुभाशेषो वदति । तत्र श्लोकः) :—

[गीतसं० - ५६]

हकुमिनि-पाणि = हविमणीक हाथ । विहि = विधाता । समुल = अनुकूल ।
 कैरव = कुमुदिनीक कूल । नारद = नारद ऋषिक । मने होअ
 गिरिज-भवानी = मन मे लगैछ जेना शंकर ओ पार्वती रह्यि ।
 कमला नारैत गाने = लक्ष्मी ओ विष्णु । विलोचन = आँखि मे ।
 वदन-रुचि = मुहक चमक ।।

(तखन विवाह विधि समाप्त कय श्रीकृष्ण हविमणीक संग
 बैसैत छथि ।)

नारद—(द्वि ओ अक्षत सँ शुभाशीर्वाद देत छथि । ताहि मे श्लोक) :—
 जेना गिरिजाक संग श्रीकृष्ण, लक्ष्मीक संग विष्णु ओ शचीक संग

श्रीशङ्करो गिरिजया रमया मुकुन्दः
 शब्दा यथा सुरपतिः सहितो विभाति ।
 साक्षं तथा स्वमनसा विहराज्य भूमौ
 भुक्त्वा चिरायुरखिलाऽभिमताऽस्तु^{५२} सिद्धिः ॥४१॥

(ततो देवक्याद्यो नीराजयन्ति । तत्र गीतं गौरी-मालव-विहाग-
 रागेण) —

[गीतसं०—१७]

साजनि ! विरविञ्च मङ्गल साजे ।
 ककुमिनि देवि सहित यदुनन्दन, हरपि चूमाविञ्च आजि ॥४२॥
 तण्डुल दूवि^{५३} रुचिर कदलीफल, मलयज पङ्क विमाले ।
 विचकिल^{५४} कुम्भ, अरुन अरविन्दहि, मांथिञ्च अनुपम माले ।
 फल इधि कुसुम निकरे^{५५} परिपूरञ्च, सुललित डल्लक हाथे ।
 विवध चूमाशिष यइए चूमविञ्च, सब मिलि माधव-माथे ॥
 गुग्गुल अगर विसाल सालरस आनिञ्च घूप समीपे ।
 सानन्द मानस भए पुनु तेजोछिञ्च, तमु तिर मनिमव दीपे ॥

इन्द्र शोभित होइत छथि सहिना अहौ हिनका संग एहि पृथ्वी पर
 दीर्घायु भय विहार कम् । अहाँक सभ अभीष्टक सिद्धि हो ॥४१॥
 (नखन देवकी आदि भारती करैत छथि । ताहि ठाम गीत गौरी-
 मालवविहाग रागक द्वारा) -

[गीतसं० - १७]

चूमाविञ्च = चूमाओन कराउ । तण्डुल = अच्छत । रुचि = सुन्दर ।
 कदली = केरा । मलयज-पङ्क = श्रीछाण्ड घँसल । विचकिल = बेली-
 फूल । अरुन अरविन्दहि = लाल कमल सँ । अनुपम = अकर
 उपमा नहि हो, अपूर्ण । निकरे = ससह सँ । सुललित डल्लक =

दम करताल ताल बुझि^{५६} हरिगुन, करिअ मनोहर माने ।
 सिंह नरेन्द्र-महीपति ब्रह्मधि, सुमति रमावति भाते ॥
 (अथाऽपि^{५७} "हे सखि ! कहव कओने विछोधि" इति गीतम् सं० ३८
 उपयोगीति ।)

(तत उत्थाय श्रीकृष्णस्तथा सह कौतुकागारं प्रयाति । तत्र गीतम्) —

[गीतसं० - १८]

कौतुक-भयन चलल वनमाली ।
 सिन्दुर धार देख तमु आली ॥
 करपङ्कज गहि राजकुमारी ।
 लघु लघु युगल चरन सङ्गारी ॥
 बाँके^{५८} बिलोचने बिहसि निहारी ।
 सबहुक मानस हरथि मुरारी ॥
 सामर तनु आनन सानन्दा ।
 जलद उपर समुदित जनि चन्दा ॥

सुन्दर डाला । माधव-माथे = कृष्णक माथ पर । साल-रस = सररक सत्त्व ।
 सानन्द मानस = आनन्दित मन । करताल = धपरी ।

(एह ठाम "हे सखि ! कहव "...." गीतसं ३८ उपयोगी अछि ।)

(तखन ऊठि श्रीकृष्ण रविमणीक रोग कोबरा घर जाइत छथि । ताहि-
 ठाम गीत) —

[गीतसं० - १८]

वनमाली = कृष्ण । आली = सखी । करपङ्कज = करकमल । लघु
 लघु युगल चरण = छोटा डोरे हुनू पसर बढ़ैत छथि । बाँके = तिरछी ।
 बिलोचने = नजरि सँ । मानस = मनके । सामर तनु = श्यामल देह ।
 आनन = मुह । जलद = मेघ । समुदित = उगल । अनुपम = अपूर्व । मन-

५१ - बुझि ख । ५२ - ... क (एहि पाँतीक अभाव) ।

५३ - बाँके बिलोचन - क ।

अनुपम रूप निरखि हरि^{६६} देहा ।
 ते^{६७} जनि^{६८} मनसिज भेल विदेहा ॥
 हरिपद प्रनत रमापति भाने ।
 सिंह नरेन्द्र महीपति जाने ॥

(ततः कौतुकमारं प्रविश्य रुक्मिण्या सहोपविशति ! तत्र गीतं पहरिआ-
 मालवरागे -)

[गीतसं०---५६]

अपहव कौतुक देखिअ आजे ।
 अभिनव नागर रमनि समाजे ॥
 जतनहु समुझा बदत नहि राखे ।
 उकुतिहि बुझिअ परम अभिलाषे ।
 अनुपम उपचित दुहुक सिनेहे ।
 फिर भए दामिनि मिलु जनि मेहे ॥
 किदहु^{६९} चकोर रमनि मिनु चन्दा ।
 कीदहु^{७०} अलि कमलिनि - मकरन्दा ॥
 कीदहु^{७१} रति पुनु पाओल सङ्गे ।
 विधिवस तनु घरि मिलल अनङ्गे ॥

सिज = कामदेव । विदेहा = वैदेहीन ॥

(तखन कोहरा घर प्रवेश कर रुक्मिणीक संग बैसत छथि । ततय
 गीत पढ़िआ-मालव राग मे) —

[गीतसं० - ५७]

कौतुक - लीला । अभिनव - नवीन चतुर नायक । रमनि - समाजे
 - सन्दरीक संग छथि । जतनहु - मनो कयला पर । समुझ -
 सोझी । उकुतिहि - बचने सौ । उपचित - बहल । दामिनि -
 विजुरी । मेहे - मेघक संग । किदहु^{६९} - भरिसक । चकोर रमनि -
 चकोर पक्षीरूपी सुन्दरी । अलि - भौरा । कमलिनि-मकरन्दा -

मने गुनि सुमति रमापति गावे ।
 पुनव पुने^{७२} दुहु समुचित पावे ॥
 (सखी सप्रथम गायतः -)

[गीतसं०---६०]

माधव ! सुनिअ निवेदन वाली ।
 सुमुखि मिलल तोहि गुनमय जाती ॥
 ते^{७३} परि पेस घरव सखि ठामे ।
 दिने दिने होअ अधिक अभिरामे ॥
 यतने मेटाए उपल-पट - रेहे ।
 न छुट जनम भरि सुजन सिनेहे ॥
 जइअओ घरव पुनु पुनु दव नीरे ।
 अविरल परिमल देखि पटीरे ॥
 तेजि भुजग बिग, मलय समीरे ।
 गुन गहि सोतल करधि सरीरे ॥
 हरसिर वास, जनक जसु सिन्धु ।
 सेहओ सुधाकर केरव - बन्धु^{७४} ॥

कमलिनीक वराग सौ । रति - कामदेवक स्त्री । विधिवस - संयोग
 सौ । तनु - देह । अनङ्गे - कामदेव । पुनव पुने^{७२} - पूर्वक पुन्य सौ ॥

(दतू सखी स्नेहपूर्वक गवैत छथि) -

[गीतसं० - ६०]

ते^{७३} परि = तत्वेक । पेस = प्रेम । सखि ठामे = सखी पर । अभिरामे
 = सुन्दर । यतने = यत्न कयला पर । उपल-पट-रेहे = पाथरक तल
 पर जे रेखा से । घरव = बैसल जाइल । नीरे = पानि । अविरल =
 लगातार । परिमल = सुगन्धि । पटीरे = ओखण्ड । भुजग = सापक ।
 मलय समीरे = मलयचलक दहिगाही बसात । हर सिर = महादेवक

सुरगने मधि सम्पत्ति लुटि लेल ।
तइअओ जलधि उछलित नहि भेल ।
सुमति रमापति भन परमान ।
न थिक परसमनि सुजन—समान ॥
(श्रीकृष्णः सलज्जं नारदमवलोकयति ।)

नारदः—एवमेतत् । किन्तु, (श्लोकेन) —

सद्वंशजा क्षत्रिमुखी विदुषी सखी ते
भूषालवर्गमपहाय हरी प्रलीना ।
प्रेमाऽऽकुलेन मनसा परिणीय चेत्यं
किं वा वशीकरणमस्ति ततोऽधिकं च ॥४९॥

तेन सर्वथा त्वत्सख्या स्वपुणं देवः शीतो वासुदेवः, विशेषतस्तु
सम्प्रति भवत्योरनुनय-वचनाऽमृतेन ।

सखी^{१४}—अज्ज ! जइ देवो सीकरेदि । [आर्य ! यदि देवः स्वीकरोति ।]

माथ पर । जनक वसु सिन्धु = जनक पिता समुद्र छथि । सुधाकर
= चन्द्रमा । कैरव-वन्धु = कुमुदफूलक मित्र । सुरगने = देवता सभ ।
जलधि = समुद्र । उछलित नहि = मर्यादाक उल्लंघन नहि कयल ।
परसमनि = स्पर्शमणि ॥

(श्रीकृष्ण लज्जायुक्त भेल, नारद के देखैत छथि ।)

नारद—ई एहिना छैक । मुदा, (श्लोकक द्वारा)—

उत्तम वंश मे जनमलि अहाँ लोकनिक ई बुधियारि सखी सभ
राजाकेँ छोड़ि श्रीकृष्णमे लगभग भय गेलीहि । प्रेमसँ ओतप्रोत मने
एहिप्रकार विवाह कय हुनक ई वशीकरणे की, ओहू सँ अधिक
थिक ॥४९॥

तेँ सभ तरहें अहाँ, सखी अपन गुण सँ कृष्णकेँ मोल लग
लेलनि, विशेष कय अहाँ हुनक विनय-वचनरूपी अमृत सँ ।

दुनू सखी—आर्य ! जँ देव स्वीकार करयि ।

श्रीकृष्णः—यथाह देवपि नारदः ।

नारदः^{१५}—सम्प्रति वन्द्यते मया निर्जन-प्रदेशे^{१६} जपाधरणाय ।

(श्रीकृष्ण उत्थाय तमनुनेतुं निष्क्रान्तः । यदुस्त्रियोऽपि निष्क्रान्तः ।)

रविमणी—(सोहो गम्) सही ! अम्हानं भाइयो विमोक्षणं कथा भविस्सदि ?

मए उण एदेण महुसवेण त्रिगुमरिदं । [सखी ! अस्माकं भ्रातृ

विमोक्षणं कथं भविष्यति ? मया पुनरेतेन महोत्सवेन विस्मृतम् ।]

सखी—सहि ! अज्ज रअणीए तए माणो गहीदव्वो । तदो जेव तस्स मोक्खो

भत्ति भविस्सदि । [सखि ! अद्य रजःस्यैव मया मानो ग्रहीतव्यः । ततो-

ऽयं तस्य मोक्षो भवति भविष्यति ।]

रविमणी—तत्थ वि को उण उवाओ ? [तथापि कः पुनरुपायः ?]

(उभे सर्वे शिक्षयतः)

श्रीकृष्णः—(प्रविश्य) कथमचिरेणैव सोहो गं प्रिया ? (पुरः स्थित्वा) प्रिये !

सम्प्रति सर्वे निर्भताः । ततः किमिति नाऽऽभाषयसि माम् ?

श्रीकृष्ण—जे कहलनि देवपि नारद सएह ।

नारद—आब एतान ह्यम निर्जन स्थान मे जय करवा लेल जाइत छी ।

(श्रीकृष्ण ऊठि हुनका जरियातवाक हेतु बहार भेलाह । यादवरत्री
सभ सेहो गेलीहि ।)

रविमणी—(उद्विग्न होइत) सखी ! अपनालोकनिक भाइक वन्धन-मुक्ति कोना

होयत ? ई तँ हम एहि महोत्सव सँ बिसरि गेलि छलहुँ ।

दुनू सखी—सखी आइ गति अहाँ मान करव । ताहि सँ आइये हुनक

(स्वमीक) बन्धन सँ छुटकारा इहदम होयत ।

रविमणी—आहमे कोन उपाय अछि ?

(दुनू सखी सभ टा सिलाबैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—(प्रवेश कय) कियेक धोड़ये कालमे प्रिया उद्विग्न भय गेलीहि ? (आगू

मे हाड़ भय) प्रिये ! सम्प्रति सभ बहार गेल । तखन कियेक एना

हमरा सँ नहि बजैत छी ?

रुक्मिणी—(विमुखीभूय मुखमयगुण्ठम् तिष्ठति ।)

श्रीकृष्णः—(करे गद्दीमुमिच्छति ।)

रुक्मिणी—(शकोपं करमाकुण्ठ्य दीर्घं निःश्वास्य मुखमाच्छाद्य रोदिति ।)

श्रीकृष्णः—(पुनरग्रतः स्थित्वा बद्धाञ्जलिः) प्रिये । प्रसीद मानिनि ! सम्प्रति प्रभातशेषेव रजनी लक्ष्मते । तथाहि (गीतेन)—

[गीतसं०—६१]

निरिवर-लीन मलीन निसाकर, अल्प नखत नहि भासे ।

मुदित कमलवनि किम् नहि तुभ्य छनि, नयन सरोज विकासे ॥१॥

ओ ने मानिनि ! गोध्रु०॥

(अत्रार्थे श्लोकः)—

अस्ताचलं याति तप्तौ मतच्छवि-

लंसन्ति नैवाऽल्पतराश्च सारकाः ।

सरोज-राजो प्रविभाति सर्वतः

तथापि ते नेत्र-सरोज-मुद्रणम् ॥४१॥

रुक्मिणी—(विमुखा भय मुँह पर घोष तानि रङ्गेत छवि ।)

श्रीकृष्ण—(हाथ पकड़य चाहैत छवि ।)

रुक्मिणी—(श्लोष गद्दित हाथ धीवि दीर्घं निःश्वास छय मुँह साँपि कनेत छवि ।)

श्रीकृष्ण—(पुनः आगुमे डाढ़ भय कल जोड़ि) प्रिये ! प्रसन्न होज मानिनि । सम्प्रति मोरुक्वा राति जकां बुझाइछ । जेना कि (गीतक द्वारा) —

[गीत सं०—६१]

निरिवर लीन = अस्ताचल पर्वत मे डबल जाइत । मलीन निसाकर =

प्रकाशहीन चन्द्रमा । अलः = थोड़सो । नखात = तरेगन । मुदित = प्रसन्न ।

नयन-सरोज = आँखि रूपी कमल । विकास = खुजैत अछि ॥१॥

(एहि अर्थमे श्लोक) - चन्द्रमा श्रीहीन भय अस्ताचल पर जाइत छवि ओ तरेगन कनिचो नहि शोभित होइछ । कमलक समूह सभठाम शोभित भय रहल अछि, तेरो अहाँक आँखि रूपी कमल मुनयले अछि ॥४१॥

सुरपति-दिश अनुराग देखिअ घनि तइअओ ने तोहि अनुरागे ।

तुअ मानस परसन नहि सुन्दरि, अम्बर परसन लागे ॥२॥

(अत्रार्थे श्लोकः)—

अनुरागोऽभवत् आच्छां माऽनुरागस्त्वपि प्रिये ।

प्रसन्नमम्बरं वीक्ष्य न प्रसीदति ते मनः ॥४४॥

तुअ मुख मोन विचारि कलावति । पिक पञ्चम कर नादे ।

पिञ्जर कीर धीर मृदु भाषय, सज होअ परम विधादे ॥३॥

(अत्रार्थे श्लोकः)—

मौनं सम्पन्नं कञ्जाक्षि ! मानं मुञ्च न^१ मुञ्च वा ।

पिकाः शुकाश्च सुधोणि ! मूकारित्थं नु साम्प्रतम् ॥४४॥

इन्दु मृणाल अमिअ सरसीरहे, तुअ तन^२ कय निरमाने ।

मानस कुलिस बलिअ निहि विरचल, तहिन होअ अनुमाने ॥४॥

सुरपति दिश = पूव दिशा । अनुराग = लाली । अनुरागे = प्रेम । मानस

= मन । परसन = प्रसन्न । अम्बर = आकाश ॥२॥

(एहि अर्थमे श्लोक) - पूव दिशामे अनुराग (लाली) भय मेल, मुदा, हे प्रिये !

अहाँक हृदयमे अनुराग (स्नेह) नहि मेल । प्रसन्न (रमणीय) आकाशके देखि अहाँक मन प्रसन्न नहि होइछ ॥४४॥

मौन = चुप । पिक = कोइली । पञ्चम = पञ्चम स्वर मे । नादे =

आवाज । पिञ्जर कीर = पिजड़ा मे सुग्गा । धीर मृदु भाषय = स्थिर

सो कोमल स्वरे वज्रीछ । विधादे = तकलीक ॥३॥

(एहि अर्थमे श्लोक) -

हे कमल सनक आँखिवाली ! अहाँ मानके छोड़, वा नहि छोड़, मुदा,

चुपपी छोड़ि दिअ । हे सुन्दर जाँघवाली ! अहाँक बजड़ा पर एखन कोइली ओ सुग्गा चुप भय जाओ ॥४४॥

(अत्रार्थे श्लोकः) —

चन्द्रेणाऽऽस्यं विधाय प्रथममधसुणालद्वयेनैव बाहू
नेत्रे रक्ताऽम्बुजाभ्यामधर-विरचना बन्धुजीवप्रसूनेः ।
सृष्ट्वा^{१६} पीयूषसारं जीवनमिह विधिमानसं किम्बकस्माद्^{१७}
वज्रेणाऽकारि कस्माद् वलिशमिव परं^{१८} वक्त्रमेतन् जाने ॥४६॥

विमरिअ दोष, रोस सवे^१ दूरि कए, वचन अमित्र कर दाने ।
निसि अवसान मान नहि राखिअ, सुमति रमापति भाने ॥४६॥
अपि च,

[गीतसं०—६२]

तुअ मुख अवतत देखि, मानिनि !
पङ्कज विकस विशेषि ॥
हेरि विलोचन आध, मानिनि !
कहिअ हृमर अपराध ॥

इन्दु = चन्द्रमा । सुणाल = कमलक नाल । अमित्र = अमृत । सरसीरुहे
= कमल, एहि सब सँ । मुख सन = अहाँक देहक । निरमाने = रचना ।
मानस = मन । कुलिस वलिश = बज्र ओ बल्ली सनक । विहि =
विधायक । सहिन = तेहन ॥४६॥

(एहि अर्थ मे श्लोक) -

विधाता पहिने चन्द्रमा सँ अहाँक मुँह गढ़ि, दूइ कमलनाल सँ बाहि,
दूइ लाल कमल सँ आँखि, माधुरीक फूल सँ ठोर ओ अमृतक रस सँ
वचनक सृष्टि कयलनि, मुदा, एकाएक फोना वज्रसँ बल्ली^१ जकाँ टेढ़ ई
अहाँक मन केँ बनओलनि से नहि जानि ॥४६॥

दोस = दोष । रोस = रोष, क्रोध । अमित्र = अमृत । निसि अवसान =
रातुक अन्त मे ॥४६॥

आओरी -

[गीतसं० - ६२]

अवनत = झुकल । पङ्कज = कमल । विकस विशेषि = विशेष रूपे

१६ - सृष्ट्वा - ख । १७ - किम्बु कस्माद् - ख । १८ - परं - क । १ - सब
- क ।

न तेजिअ विधुमुखि ! तोर, मानिनि !
आकुल नयन चकोर ॥
आनन इन्दु समान, मानिनि !
कज्जले^१ होअ मलान ॥
परिहरि दीघ निसास, मानिनि ।
न रहए अधरक भास ॥
सुमति रमापति भान, मानिनि ।
मिथिला - पति रस जान ॥

रामिणी—(अधु निवार्य कटाक्षोणाऽवलोकयति ।)

श्रीकृष्णः—(सहर्षम्) प्रिये ! स्वयि यादृशो मम स्नेहोऽस्ति तदव्याकर्णय ।
(पुन गीतेन) :—

[गीतसं०—६३]

तोहे^२ हम अहिन सिनेह, प्रेयसि ! ॥ध्रु०॥
(इत्यादि^३) ।

फुलाइत अछि । हेरि = ताकि । विलोचन आध = आधा दृष्टि सँ ।
तेजिअ = छोड़ । विधुमुखि = चन्द्रमुखी । नयन-चकोर = हमर आँखि-
रूपी चकोर पक्षी । आनन = मुँह । इन्दु = चन्द्रमाक । कज्जले =
काजर सँ । परिहरि = छोड़ि । दीघ = पंघ । अधरक भास = ठोरक
शोभा ॥

रामिणी—(नोर रोकि कटाक्ष सँ देखैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—(सहर्षं) प्रिये ! अहाँ पर हमरा जेहन स्नेह अछि सेहो सुत । (पुनः
गीतसँ) :—

[गीतसं०—६३]

तोहे^२ हम = अहाँकेँ हम जेहन स्नेह करैत छी । प्रेयसि = प्रिये ।

२ - इत्यादि - क ख (दूह पोखी मे गीत अग्रज अछि ।)

रुक्मिणी—(सानन्दं विहस्माऽवलोक्य च सखीं सम्बोधय वदति) सहीओ !
विष्णावेहि अजजउत्तं, जइ सच्चं एव तदो अम्हाणं भादुणो विमो-
क 'ण' दाणि जेव करेदु । [सखी ! विज्ञापयतम् आर्यपुत्रं, यदि
संगमेतन् ततोऽस्माकं ज्ञातु विमोक्षणमिदानीमेव करोमु ।]

सखी—(श्रीकृष्णं निवेदयतः ।)

श्रीकृष्णः—स्वमेतावत्येव कार्यं एवमायासः ?

सखी—जदोस्स गरओ पुव्वाबराहो तदो अण्णहा^५ सङ्खि पिअसहीए हिअअं ।
[यतोऽस्य गुरुकः पूर्वापराधः ततोऽप्यथाशङ्कि प्रियसख्या हृदयम् ।]

श्रीकृष्णः—तहि युत्तमेव । कः कोऽत्र भो !

किङ्करो (प्रविश्य, प्रणम्य च) एसोह्मि । आणवेदू सामी । [एवोऽस्मि ।
आज्ञापयतु स्वामी ।]

श्रीकृष्णः—विमोक्ष इमं क्वपदेन विरूपं विधाय च समानीयतां स्वमी ।

(किङ्करो निष्क्रम्य तथा कुरवा तेन सहयातः ।)

(ततः प्रविशति बलदेवः)

रुक्मिणी—(आनन्दपूर्वकं हँसि ओ देखि सखीकेँ सम्बोधित कय वज्रत छथि)
हुह सखी ! कहियनु आर्यपुत्र केँ, न ई सत्य तेँ हमरालोकनिक
भायकेँ एखन बन्धनमुक्त करयु ।

दुनु सखी—(श्रीकृष्णकेँ कहैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—को एतवे काजक विषय में एहन आयास भेल अछि ?

दुनु सखी—जै कि हुनक पैव पुर्वक अपराव छनि तेँ प्रियसखीक हृदय आन-
तरहए शंका में छल ।

श्रीकृष्ण—सखन तौ ठीकेँ भेल । कयो एतय अछि ?

नोकर—(प्रवेश कय ओ प्रणाम कय) इयेह छी, अज्ञा देल जाओ सरकार ।

श्रीकृष्ण—स्वमीकेँ खोलि ओ दाढ़ी काटि विरूप बनाय लावह ।

(नोकर बाहर जाय, सहिना कय स्वमीक सोन अबैत अछि ।)

(सखन बलदेव प्रवेश करैत छथि ।)

बलदेवः^५—अतः परमसौ न विरूपणीयः ।

किङ्करो^६—(तथा करोति ।)

बलदेवः—(रुक्मिणी प्रति) कल्याणि ! भातु वैरूप्यहेतोस्तवया मम्यु न कार्या ।
यतोऽस्माकं क्षत्रियाणां विग्रहे सति सर्वं भवत्येव, किन्तु *वधाहोऽ-
प्ययं तथाऽनुग्रहादेव श्रीकृष्णेन रक्षितो मोचितश्च ।

(रुक्मिणी सानन्दं सखीमवलोकयति ।)

सुरक्षिता—जहा अउजेण भागतं तहा करिसदि पिअसही । [यथा आर्येण
आज्ञप्तं तथा करिष्यति प्रियसखी ।]

नारदः—(प्रविश्य, रुक्मिणमवलोक्य परिहास्यदिकं विधाय) गच्छतु भवान् ।

(इति तेरनुजातो स्वमी निष्क्रान्तः, प्रतिज्ञावचनं संस्मृत्य लज्जया
भोजकट-मगरे निवासमकरोत् ।)

नारदः—भगवन् ! अनुजानीहि मां ब्रह्मसदन-गमनाय । किं वा भूयस्तव प्रियं
मया सन्पादनीयम् ?

बलदेव—एहि सौ बेसी विरूप हिनका नहि बनावह ।

(नोकर सहिता करैल ।)

बलदेव—(रुक्मिणीक प्रति) भाग्यशालिनि ! भाइक विरूप हयबाक हेतु अहाँ
कोध जनु करी । कियेक नै हमरालोकनि जे क्षत्रिय छी, तनिकां युद्ध
भेला पर तम किछु भय जाइछ । किन्तु मृत्यु-दण्डभागियो ई अहाँक
कूपे में श्रीकृष्णक द्वारा बचाओल गेलाह ओ छोड़ल गेलाह ।

(रुक्मिणी आनन्दपूर्वक सखीकेँ देखैत छथि ।)

सुरक्षिता—जेना आर्य आज्ञा देल अछि तेना करतीह प्रियसखी ।

नारद—(प्रवेश कय, स्वमीकेँ देखि हँसी मजाक कय) जाइ अहाँ ।

(हुनकालोकनि सौ आज्ञा पाबि स्वमी बाहर गेलाह । अपन
प्रतिज्ञा वचन स्मरण कय लाजें भोजकट मगरे निवास कयलसि ।)

नारद—भगवान् ! आज्ञा दिय हमरा ब्रह्मलोक-जयवा लेल । आओर की पुनः
अहाँक प्रिय हम करू ?

श्रीकृष्णः - देवर्षे ! पूर्णः सर्वो नो मनोरथः । वीदभीं पृच्छ ।

नारदः - कथयतु भवती ।

रुक्मिणी - अञ्जस्य प्यसादेण सर्वो नो पितृं संवृत्तं, तद्वावि सम्पदं एदं भोक्तु । [आर्यस्य प्रसादेन सर्वे नः प्रियं संवृत्तम् । तथापि साम्प्रतमिदं भवतु ।]

(ततः सखीभ्यां सह गायति । सर्वे च गायन्ति तत्र गीतम्):-

[गीत सं०-६४]

वारिद वारि विमुञ्चथु काले ।
अवनि रह्यु बहु अग्ने विसाले ॥
परजा पालि धरम अनुरूपे ।
मुदित रह्यु मिथिलापति भूये ॥
भारति भगति 'भावे' थिर वासे ।
बुधजन - मानस कश्चु विलासे ॥

श्रीकृष्ण - देवर्षि ! हमरालोकनिक सभ मनोरथ पूर्ण भय गेल । रुक्मिणीके पुछियन् ।

नारद - रुक्मिणी ! अहाँ कहू ।

रुक्मिणी - आर्यक कृपासँ हमर सभ प्रियकार्य पूर्ण भेल । तैयो एखन ई होअथी ।

(तखन दुनू सखीक संग गबैत छथि ओ सभ केओ गबैत छथि । ताहिठामक गीत)-

[गीतसं०-६४]

वारिद = मेष । वारि = पानि । विमुञ्चथु काले = समय पर छोड़थु, वरिसथु । अवनि = पृथ्वी । मुदित = प्रसन्न । भारति = सरस्वती । भगति भावे = भक्तिभावना सँ । बुधजन मानस = विद्वानक मन मे । विलासे = खेल । तसु = विद्वानक । वारिद -

तसु गुन जानि हरषि तत्काले ।
वारिद हर्यु सवत महिपाले ॥
नृपति होअ जनु पिद्युन - समाजे ।
सानन्द रह्यु सकल द्विजराजे ॥
सविनय सुमति रमापति मनि ।
रूपक करथु सुजन अनुरागे ॥

श्रीकृष्ण:-देवर्षे ! सम्पत् प्रियया तत्सखीभ्यां च पार्थितम् । तस्मादहमपि याचे । (श्लोकेन) :-

काले वारिधरो विमुञ्चतु जलं, शश्वैः पृथुण्डिवनि-
नित्यं चाऽस्तु, महीभुजः पृथुविता, धर्मेण धाम्नु पूजाः ।
वाग्देवी १पिथ भक्तितो हृदि सतां भूमाद् विलासोऽञ्जला
मा भूर् भुवसमा खलैरपचिता, तस्मिन् विप्राः सदा ॥४॥
नारद:- (सोऽस्मात्) एवमस्तु ।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

वरिदता । सवत = हर दम । महिपाले = राजा, नृपति = राजा ।
पिद्युन-समाजे = दुर्जनलोकक सम्पर्क मे । द्विजराजे = सद्ब्राह्मण ।
रूपक = दृश्यकाव्य (रुक्मिणीपरिणय नाटक) मे । सुजन =
नीकलोक ॥

श्रीकृष्ण-देवर्षि ! प्रिया ओ हुनक दुहु सखी यथोचित माऊ कयलनि । ते हमहुँ मर्जै छी । (श्लोकक द्वारा) -

उचित समय पर मेष जल वरिसओ, पृथ्वी धाम्य सँ पुरल रह्य,
प्रसन्न राजालोकनि धर्मासँ प्रजापालन करथु, भगवती वाणी
(सरस्वती) प्रियभक्ति सँ सज्जनक हृदयमे लीला कय प्रकाशित
होथु, राजाक सभा दुर्जनसभसँ जनु भरथ ओ ब्राह्मणलोकनि
सवत जानन्धित रहथु ॥४॥

नारद-(आनन्द पूर्वक) एहिना होअओ ।

(सभ केओ बहार भय गेल ।)

॥ इति रुक्मिणी-परिणये रुक्मिणीहरण-परिणय-प्रदर्शनं
नाम षष्ठोऽङ्कः ॥

इति श्रीमद् भृगुदेव-कुलोद्भव-सत्कवि-श्रीमान्कृष्णपति-उपाध्यायारमजेन,
महामहोपाध्याय-शङ्करमिश्र-कुलोद्भव-महामहोपाध्याय-
रतिपतिमिथाऽनुज - सम्मिश्र - धर्मपतिशर्मणो
दीहिबेण, पत्नीसं श्रीरमापति-शर्मणा
विरचितं रुक्मिणी-परिणय - नाटकं
समाप्तम् ।

रुक्मिणी-परिणय मे रुक्मिणीक हरण ओ विवाहक प्रदर्शन
नामक छठम अङ्क समाप्त ॥

श्रीमान् भृगुदेवक कुलमे उत्पन्न, कविवर श्रीमान्कृष्णपति उपाध्यायक
पुत्र, महामहोपाध्याय - शङ्करमिश्रक कुलमे उत्पन्न - म०
म० रतिपतिमिश्रक छोटा भाय-बेष्ट मिश्र
धर्मपतिशर्माक दीहिब, पत्निकारकुल-
संभव श्रीरमापतिशर्माक बना-
ओल रुक्मिणीपरिणय
नाटक समाप्त
भेल ॥



रमापतिक रफुट गीत

१---त्रिपुरसुन्दरीक गीत

जय जय विभुवन - सुन्दरि शंकरि, बैरि - भायंकरि माया ।
जवाकुसुम - कुंकुम - नूतनरवि, - निन्दक लोहित काया ॥
मणिमय मुकुट सीस अतिसोमित, नील - वरन^१ कच-पासे ।
कुटिल अलक विरचित मुकुटावलि, भीह काम-धनु^२ भासे ॥
अचर प्रवाल, दसन दालिम-विज, मधुर हास^३ भल छाजे ।
आनन्दे तोनि विलोल विलोचन, नासा वेसरि^४ राजे ॥
हीरक जटित विमल चामीकर, श्रुति साटक विसाला ।
मानिके विद्रुमे^५ खचित नखत सम, मंजुल मोतिम माला ॥
आधा इतु तिलक सह सुन्दर, [पावक^६] शिबुक काँती ।
पास अंकुस धनु बान विभूषित, चारि भुजा भल भाँती ॥

१-शंकरि = वत्स्याणकारिणी त्रिपुर सुन्दरी । बैरि भायंकरि = शत्रुक हेतु भाया-
नक । जवाकुसुम = निन्दक = ओढ़लक फूल, केसर ओ प्रातःकालीन
सूर्यक छवि के निन्दित करववाला । लोहित काया = लाल देह । नीलवरन
कचपासे = केश नीला छति । कुटिल अलक = टेढ़े मेढ़के श मे । कामधन =
कामदेवक धनुष । प्रवाल = मूड़ा । दसन = दाँत । नासा = नाक मे । हीरक
= हीरा सँ । चामीकर = सोनक बनल । श्रुति साटक = कानक महना ।
मानिके विद्रुमे = मणि ओ मूड़ा सँ । नखत सम = तारा जकाँ । इतु =
चन्द्रमा । पावक = अभिन । काँती = कान्ति । करिवर कुम्भ - हाथीक
गस्तक । उरजयुग = दुनू स्तन । अरुन दूकुले = लाल पसल । अमूले =

हरिवर कुम्भ समान उरज युग, पहिरन अरुन हुकूलें ।
 किंकिनि कंकने केयूर नेउर, [भूषण] विमल अमूलें ॥
 नख दीधिति गञ्जित रजनीकर, चरण सरोज समाने ।
 मृगमद केसरि अंग विलेपित, मुञ्ज परिपूरित पाने ॥
 कमलापति, कमलासन, शंकर, सुअ पद वरय होआने ।
 सभे अभिमत पूरिअ परमेश्वरि ! प्रनत रमापति भाने ॥

२---भूला - गीत

वंसी - बट^१ तहू लाओल, नन्दकुमार - हिडोल ।
 भानुसुता - हरिसीलित शिशिर अनिल मृदु डोल ॥
 नव धन गरजे सिखर पर^२, मालति रम रोळम्ब ।
 गगन तिरोहित रवि ससि, कुसुमित कुटज कदम्ब ॥

पञ्चराग मणि मण्डित, इन्द्रनील-युग कांति ॥

ऊपर फटिक-सकल दय, केलि कयल आरम्भ ॥

अमूल्य ॥ नख-दीधिति-गञ्जित = नहक प्रकाश सौ तिरस्कृत । रजनीकर = चन्द्रमा । सरोज = कमल । मृगमद = कस्तूरी । कमलापति = विष्णु । कमलासन = ब्रह्मा । अभिमत = अभिलाषा ॥

२-वंशीवट = बड़क गाछ जतय कृष्ण वंशी बजयैत छलाह । तहू = सैं (वस्तुतः 'तह' पाठ उचित) । नन्दकुमार हिडोल = कृष्णक भूला । भानुसुता-डोल = यमुनाक स्पर्श सौ शीतल बसातक द्वारा मन्द मन्द डोलैत अछि । धन = मेघ । मालति रम रोळम्ब = मालतीफूलक संग भौरा रमण करैछ । तिरोहित = श'पाएल । रवि-ससि = सूर्य-चन्द्र ॥ इन्द्रनीलयुग = दूइ गोठ इन्द्रनील मणिक समान ॥ फटिकसकल = स्फटिक पाथरक

८-० (अभाव) ।

१-वट । २-तिखरावर । ३- (पौव पांतीक लगभग खण्डित बसाइछ)

सुविडै^४ वस्त्र^५ चढाओल^६, दइए विमल मध^७ तूल ।
 हाटके पाट सखी संगे, राधा नागरि भूल^८ ॥
 तनु छवि निम्बित चम्पक, मनि-भूषण बहुमूल ।
 कनक किनारी राजित, परिहृण नील दूकूल ॥
 पवने^९ उड़ अवगुण्डन, वेकत होअ मुखकांति ।
 जनि युग खंजन लागल गगन सरोरुह पांति ॥
 बहुविधि ललित^{१०} हास कय, पञ्चम सरे^{११} कर गान ।
 जनि उरवसि परिजन लय, गावति चढ़ल विमान ॥
 सेव विमल परिपूरित, देखि हृदय होअ भान ।
 कनक वेधि^{१२} मन गुनि-जनि^{१३}, मुकुता फल निरमान ॥
 वदन सुसौरभ उपगत सरस मधुप^{१४} संकार ।
 ते^{१५} उर^{१६} किंकिनि-कलरव हरि-हरि^{१७} वचन उचार ॥

टुकड़ा । केलि = विलास, खेल । सुविडै = मजबूत । मध = कपड़ाक बीच मे । तूल = तूर । हाटके पाट = रत्नयुक्त रेशमी वस्त्र पहिरि ॥
 तनु छवि = देहक कान्ति सौ । कनक = सोना । परिहृण = पहिरन वस्त्र । दूकूल = साड़ी ॥

पवने = बसात सौ । अवगुण्डन = घोघट । वेकत = व्यक्त । युग खंजन = खंजनक जोड़ी । गगन सरोरुह = आकाश-कमल (मुँहमे) । ललित = सुन्दर । सरे = स्वर सौ । उरवसि = उर्वशी अप्सरा । परिजन = परिवार ॥

सेव विमल = स्वच्छ घाम । कनक वेधि = सोनाके छेदि कय बहार भेला । मुकुताफल = मोतीक दाना । सुसौरभ = सुगन्ध । उपगत = भेल । मधुप = भौरा । किंकिनि कलरव = पायलक शब्द सौ ॥

४- सुविड । ५- वडाओल । ६- मख । ७- तूल । ८- लाल । ९- धधि । १०- जनु । ११- रूप । १२- ते उर कलकिनि-ख । १३- हर ।

उरसिज भार वेआकुल, मध्य भाँगि १४ जनि जाय ।
 तें त्रिवली—गुन बांधल, पुरवहि मदन बनाय ॥
 एहि अवसर हरि आएल, विसरल सभ अभिमान ।
 सिंह नरेन्द् भूप बुभुक्षु सुमति रमापति भान ॥

उरसिज = स्तनक । मध्य = डोँड । भाँगि = टूटि । त्रिवली-गुन
 = पेटक रेखाकपी डोरी सँ । पुरवहि = पहिनुहि । मदन = कामदेव ।

१४—भाग जाने ।

